कवि-श्री माला

कश्मीरी

परमानन्द

राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा

मूल्य २)

Inf. J.D. २२००

सादर भेंट

राष्ट्रभाषा प्रचार समिति,

पो. हिन्दीनगर,

वर्धा

अ. शुक्ल
१५।१२।५४.

कवि-श्री माला

* कश्मीरी *

कवि :

परमानन्द

सम्पादक–अनुवादक

पृथ्वीनाथ 'मधुप'

राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा

प्रकाशक :
मोहनलाल भट्ट
मन्त्री :
राष्ट्रभाषा प्रचार समिति,
हिन्दीनगर, वर्धा

प्रथम संस्करण--३०००
मई, १९६२
मूल्य--रु. २/-

मुद्रक :
मोहनलाल भट्ट
राष्ट्रभाषा प्रेस,
हिन्दीनगर, वर्धा

आमुख

हर्षका विषय है कि राष्ट्रभाषा-प्रचार-समिति, वर्धा अपने कार्य कालके २५ वर्ष सन् १९६१ में पूरे कर रही है। इस उपलक्ष्यमें मनाये जानेवाले रजत-जयन्ती महोत्सवके अवसरपर सभी भारतीय भाषाओंके मान्य कवियोंका तथा उनके उत्कृष्ट काव्यका परिचय 'कवि-श्री माला' की पच्चीस पुस्तकोंमें हिन्दी-गद्यानुवाद सहित प्रकाशित करनेकी योजनाके अन्तर्गत प्रस्तुत ग्रन्थ पाठकोंके समक्ष आ रहा है।

यद्यपि किसी भी भाषाके सर्वश्रेष्ठ काव्य-सर्जकका निश्चय करना एक कठिन कार्य है; फिर भी अपनी सीमाओंको ध्यानमें रखते हुए गण्यमान्य उन-उन भाषाओंके विद्वानोंकी रायसे ही चुनावका कार्य सम्पन्न किया गया है।

प्रत्येक पुस्तकके आरम्भमें जिस भाषाके कविकी रचनाओंका चयन किया गया है, उस भाषाके साहित्यका परिचय और कवि विशेषका परिचय दिया गया है।

कश्मीरीमें कुछ ऐसी विशिष्ट ध्वनियाँ हैं जो देवनागरीमें नहीं हैं; यथा--

स्वर--

१. अ' – प्रसारित ओष्ठ, पश्च, अर्ध विवृत। यथा–अ'थ = हाथ; अ'छ, ल'र शब्दोंमें। (यह स्वर केवल कश्मीरीमें स्वतन्त्र रूपसे आता है।)

२. आ'–प्रसारित, ओष्ठ,पश्च, अर्ध संवृत। यथा–का'शुर् = कश्मीरी भाषा–ओ'स,ला'र शब्दोंमें। (यह स्वर केवल कश्मीरीमें आता है।)

३. उ॑ – प्रसारित ओष्ठ,पश्च,सम्वृत,ह्रस्व। यथा–कतरु॑ = बूँद,तु॑र,गु॑थ आदि शब्दोंमें।

४. ऊ॑ – प्रसारित ओष्ठ, पश्च, सम्वृत, दीर्घ। यथा–सू॑त्य् = साथ,तू॑र,डू॑स आदि शब्दोंमें।

५. ए॒ – प्रसारित ओष्ठ, अग्र, अर्ध सम्वृत, ह्रस्व। यथा–वक्तस् पे॒ठ् = समयपर, मे॒।

६. ओ॒ – गोलाकार ओष्ठ, पश्च, अर्ध सम्वृत, ह्रस्व। यथा–तो॒मुल = चावल,नो॒ट,हो॒टमें।

व्यंजन--

(अ) च़ (ts)–अघोष,अल्पप्राण,दन्त मूलीय,स्पर्श सघर्षी। यथा–चू॑ट् = सेव(Apple)।

(आ) छ़ (tsh)–अघोष, महाप्राण, दन्त मूलीय, स्पर्श संघर्षी। यथा–लछ़् = धूल।

(इ) ज़ (dz)–सघोष, अल्पप्राण, दन्त मूलीय, स्पर्श संघर्षी। यथा–ज़चु = किरण।

भारतीय भाषाओंमें कश्मीरी ही एक ऐसी भाषा है, जिसमें शब्दके आदि वर्णका भी द्वित्व होता है; यथा–व्वम्मेद् = उम्मीद।

श्री पृथ्वीनाथ 'मधुप'ने प्रस्तुत पुस्तकमें संकलित साहित्यको चुनने,काव्यांशको सम्पादित तथा अनूदित कर सारी सामग्रीको इस रूपमें प्रस्तुत करनेमें सहयोग दिया है। पुस्तकमें संकलित कविका ब्लॉक श्री शम्भूनाथ पारिमू तथा श्री मधुपके सद्प्रयत्नोंसे उपलब्ध हुआ है। संग्रहकी आवरण डिजाइनको बनवा देनेमें श्री व्ही. एन. अडारकरजी (डीन, सर जे. जे. इन्स्टीटयूट ऑफ अप्लाईड आर्ट, बम्बई) का उदार सहयोग मिला है, उसके लिए समिति सभीकी आभारी है।

मन्त्री, राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा

अनुक्रमणिका

कवि-श्री माला

कश्मीरी



परमानन्द

कश्मीरी साहित्य परिचय

कश्मीरी भाषा और उसका साहित्य

• • •

(क) भाषा-परिचय

भाषा साहित्यका शरीर है। अतः किसी भी साहित्यका परिचय प्राप्त करना उस साहित्यकी भाषाका स्वरूप एवं विकास समझे बिना अधूरा ही रहता है। हर भाषाके पीछे एक विशाल परम्परा होती है। कश्मीरी भाषा भी इस वातका अपवाद नहीं है।

कश्मीरी भाषाके उद्‌भवके सम्वन्धमें अनेक मतमतान्तर हैं। इनमेंसे अधिकांश आलोचनाकी कसौटीपर पूरे नहीं उतरते हैं। अतः उन सभीका यहाँ उल्लेख करना कोई अर्थ नहीं रखता। वास्तवमें देखा जाए तो कश्मीरी भाषा एवं साहित्य अभी एक लम्बे शोधकी अपेक्षा रखता है। क्योंकि आज तक कश्मीरी भाषा एवं साहित्यका कोई प्रामाणिक इतिहास नहीं लिखा गया है।

कश्मीरी भाषाके उद्‌भवके सम्वन्धमें जो मत प्रचलित हैं, उनमेंसे एक अधिक समीचीन एवं वैज्ञानिक लगता है। इस मतको अधिकांश विद्वानों एवं भाषा-शास्त्रियों का समर्थन भी प्राप्त है। इसी मतको आधार मानकर हम निम्म पंक्तियोंमें कश्मीरी भाषाके उद्‌भवपर संक्षिप्त रूपसे चर्चा करना चाहेंगे।

कश्मीरी भारत-योरोपीय भाषा-कुलके अन्तर्गत आनेवाली भारत-ईरानी भाषा उप-कुलसे सम्बन्ध रखती है। भारत-ईरानी शाखाकी तीन उप-शाखाएँ हुई हैं, जिनमेंसे "पैशाची" (प्राकृत) या "दर्दी" भी एक है। आगे चलकर इस "पैशाची" की निम्नलिखित तीन उप-शाखाएँ हुई हैं :—

(१) काफर, (२) चित्राली और (३) शीना।

पैशाची भाषाकी "शीना" उपशाखासे तीन और उप-शाखाएँ जन्मीं :—

(१) शीना विशेष, (२) कोहिस्तानी और (३) कश्मीरी।

इस प्रकार कश्मीरी भारत-ईरानी भाषा-उपकुलकी "पैशाची" शाखाकी "शीना" उप-शाखासे जन्मी है।

कश्मीरी भाषाको "पैशाची" से "कश्मीरी तक पहुँचते-पहुँचते अनेक परिवर्तन एवं प्रभावोंसे गुजरना पड़ा है। सबसे अधिक प्रभाव जो कश्मीरी पर पड़ा, वह संस्कृतका था। यह प्रभाव इतना गहरा है कि बहुतसे विद्वान कश्मीरीको संस्कृतसे उत्पन्न हुई मानने लगे थे; परन्तु सन् १८८७ ई० में इस मान्यताको प्रोफेसर अर्नेस्ट कोहनने गलत सावित किया था। अस्तु!

संस्कृत भाषा कब और कैसे कश्मीरमें पहुँची? यह प्रश्न भी एक लम्बे शोधकी अपेक्षा रखता है। हाँ, कश्मीरी शब्द-भण्डारमें अधिकांश शब्द संस्कृतके हैं, जिनमेंसे कुछ विशेष कश्मीरी उच्चारणसे प्रभावित हुए हैं, जैसे :—

कश्मीरी	संस्कृत
ज़ल	जल
शॊद	शुद्ध
यवुन	यौवन; आदि।

चौदहवीं शताब्दीसे सिक्खोंके आने तक अर्थात् मुसलिम राज-कालमें कश्मीरी पर फारसी भाषाका भी काफी प्रभाव पड़ा। सिक्खोंके शासनकाल (१८१९ से १८४६) में कश्मीरीमें कुछ पंजाबी शब्द भी समा गए। परन्तु पंजाबीका प्रभाव बहुत कम एवं सतही ही रहा। डोगरा राजकालसे, जबसे कि अँग्रेजी, हिन्दी तथा उर्दू भाषाएँ लोकप्रिय होने लगीं, कश्मीरी पर इन भाषाओंका भी प्रभाव पड़ता जा रहा है।

ऊपर कहा जा चुका है कि कश्मीरी भाषा पर दो भाषाओं—संस्कृत तथा फारसी—का विशेष प्रभाव रहा है। कश्मीरी हिन्दुओंके शब्द-भण्डारमें संस्कृत शब्दोंका बाहुल्य है और कश्मीरी मुसलमानोंके शब्द-भण्डारमें फारसी शब्दोंका। इसी आधारपर कश्मीरी भाषाको दो भागों—१. हिन्दू-कश्मीरी और २. मुस्लिम कश्मीरीमें, सहजमें ही बाँटा जा सकता है। यह विभाजन कश्मीरी भाषाका ध्वन्यात्मक एवं ऐतिहासिक अध्ययन करनेके लिए भी अनिवार्य है। हिन्दुओं और मुसलमानोंकी कश्मीरीमें क्रमशः संस्कृत तथा फारसीके शब्दोंका आधिक्य तो है ही, साथ ही इनके

उच्चारणमें भी विशेष अन्तर है। मुसलमान साधारणतः वर्णके अन्तिम स्वरको उच्चारित ही नहीं करते या अर्द्ध स्वरको उच्चारित करते हैं। ये लोग 'र' का उच्चारण ही नहीं करते और 'ओ' का 'य' उच्चारण करते हैं। इन विचारोंकी दृष्टिमें निम्नलिखित उदाहरण पर्याप्त होंगे :—

हिन्दू	मुसलमान
१—ज़ल	आव
२—क्या / क्याह	क्यअ
३—ग्रांगल	गांगल
४—ब्रोर	ब्योर; आदि।

'कष्टवारी', जम्मू प्रान्तके किश्तवार जिलेमें बोली जानेवाली भाषाको कश्मीरीकी मुख्य बोली माना जा सकता है। कई विद्वान जम्मू घाटीके निकटकी पोगली, सिराजी और रामवनीको भी कश्मीरीकी उप बोलियाँ मानते हैं। कश्मीरी विशेषतः कश्मीरी घाटीमें बोली जाती है। "दक्षिण पश्चिम किश्तवारमें तथा दक्षिणमें पीर पाँचालकी पहाड़ियोंपर चिनाव नदीके किनारे-किनारे इसकी बोलियों एवं उपबोलियोंका प्रचार है।"

कश्मीरीमें वे सभी ध्वनियाँ (घोष महाप्राणको छोड़कर) तो हैं ही, जो देवनागरीमें हैं; परन्तु कश्मीरीमें इन ध्वनियोंके अतिरिक्त कुछ और विशेष ध्वनियाँ भी हैं। कश्मीरीकी इन विशेष ध्वनियोंको उच्चारण चिह्नों सहित नीचे दिया जा रहा है :—

१. विशेष स्वर-ध्वनियाँ :—

(क) अ' : जैसे कश्मीरीके 'ल'र' (मकान) शब्दमें।
(ख) आ' : जैसे कश्मीरीके 'ला'र' (खीरा) शब्दमें।
(ग) उॅ : जैसे कश्मीरीके 'तॅुर' (लीर) शब्दमें।
(घ) ऊॅ : जैसे कश्मीरीके 'तूॅर' (सर्दी) शब्दमें।
(ङ) ओ़ : जैसे कश्मीरीके 'खो़ट' (खोटा) शब्दमें।

२. विशेष व्यञ्जन-ध्वनियाँ :—

(क) च़ : जैसे कश्मीरीके 'च़र' (खटमल) शब्दमें।
(ख) छ़ : जैसे कश्मीरीके 'छ़ठ' (सर्द हवा) शब्दमें।
(ग) ज़ : जैसे कश्मीरीके 'ज़र' (वहरापन) शब्दमें।

कश्मीरी भाषाके लिए किस लिपिका प्रयोग हो, यह आजकल एक समस्या बन गई है। कश्मीरीकी प्राचीन एवं मौलिक लिपि शारदा है। शारदा ब्राह्मी लिपिकी, उत्तर भारतीय ब्राह्मीकी आत्मजा है। आजसे लगभग छह सौ वर्ष पहले कश्मीरी इसी लिपिमें लिखी जाती थी। यद्यपि आजकल भी कश्मीरके कई हिन्दू विद्वान

इसी लिपिका प्रयोग करते हैं; फिर भी इसका प्रचार अब नहींके बराबर ही है। पंजाबमें प्रचलित टकरी लिपिसे शारदाका बहुत साम्य है। शारदा लिपिमें प्रत्येक अक्षर एवं मात्राका अलग-अलग नाम है। जैसे :—

श्र॰ = अ 'आदवअ'; श्रु = आ 'अयतव आ';
क = क 'कोवक'; म = च 'चा़टूच़';
ॖ = ा 'वहय', ॅ = ॢ 'खूर'; आदि।

कश्मीरमें मुसलमानोंके शासनसे फारसी राजभाषा बनी। परिणामस्वरूप फारसी भाषा एवं फारसी लिपिका प्रयोग बढ़ता गया। कश्मीरीके लिए भी कई लोगोंने फारसी लिपिको ही अपनाया; परन्तु फारसी लिपिके अनेक दोषोंके कारण कश्मीरी-ध्वनियाँ इसमें अभिव्यक्त नहीं हो सकती हैं। कुछ समय पहले कश्मीर सरकारके शिक्षा-विभागने कई भाषाविदोंकी एक समिति कश्मीरी भाषाकी लिपि तलाश करनेके लिए बनाई थी; परन्तु इसके निर्णय पूर्णरूपसे असफल हुए। नसतालीक़ (फारसी लिपि) में कश्मीरी ध्वनियोंको व्यक्त करनेके लिए कुछ हेरफेर भी किए गए हैं, परन्तु फिर भी यह लिपि दोषपूर्ण है और इसके प्रयोगमें काफी दिक्कत आती है।

कश्मीरीके लिए देवनागरी लिपिका प्रयोग बहुत समयसे होता आया है। आजकल भी बहुतसे लोग इसका प्रयोग करते हैं। यह लिपि अपनी विशेषताओं एवं वैज्ञानिकताके कारण कश्मीरीकी सभी ध्वनियोंको व्यक्त करनेमें समर्थ है, केवल कई विशेष कश्मीरी ध्वनियोंके लिए उच्चारण चिह्नों (Diacritical marks) के प्रयोग करनेकी आवश्यकता है। इस लिपिके सीखनेमें 'नसतालीक़' की अपेक्षा कुछ भी दिक्कत नहीं है। यदि संकीर्णताको छोड़कर कश्मीरीके लिए सभी लोग देवनागरी लिपिका ही प्रयोग करें तो कश्मीरी भाषाकी एक बहुत बड़ी समस्या हल हो जाए।

१.

(ख) कश्मीरी पद्य :

प्राप्त सामग्रीके आधारपर सभी विद्वान एकमत होकर कश्मीरी साहित्यका श्रीगणेश लल्लेश्वरीके 'वाखों' (वाक्यों) से मानते हैं। परन्तु लल्लेश्वरीसे पहले ही कश्मीरी-पद्यका प्रस्फुटन हुआ था। जम्मू-कश्मीर राजके रिसर्च विभाग द्वारा १३ वीं शताब्दीके एक कवि शितिकण्ठके 'महानय प्रकाश' का प्रकाशन हुआ है। शितिकण्ठके इसी ग्रन्थमें पुरानी कश्मीरीका नमूना सुरक्षित है। एक उदाहरण दृष्टव्य है :—

इतयओवल्लीन परम्पर
दीपमाला जन अन्धकार
धमित धाम उदयेत निरन्तर
दिशिशपायवतु अविकार ॥

कश्मीरीकी आदि कवियित्री लल्लेश्वरीका जन्म "पाँद्रेण्ठन" नामक ग्राममें अनुमानतः चौदहवीं शताब्दीके मध्यमें हुआ था। उस समय कश्मीरपर सुलतान अलाउद्दीन (कश्मीरका तृतीय मुस्लिम शासक, १३४७ ई.) राज करता था। बारह वर्षकी अल्पायुमें ही लल्लेश्वरीको "पाँपोर" नामक ग्रामके एक पण्डित घरानेमें ब्याहा गया। लल्लेश्वरीके श्वसुर महोदयने कश्मीरी पण्डितोंकी प्रथाके अनुसार विवाहके उपरान्त इनका नाम पद्मावती रखा। लल्लेश्वरी बचपनसे ही धार्मिक विचारोंवाली स्त्री थी। पतिगृहमें बारह वर्ष तक सासके अत्याचार सहकर लल्लेश्वरीने गृह-त्याग किया और अपने कुलगुरु सिद्ध श्रीकण्ठकी शरणमें गई। गुरुसे उन्होंने योगकी दीक्षा ली और कालान्तरमें इस विद्यामें गुरुसे भी आगे बढ़ीं।

लल्लेश्वरीके वाक्य कश्मीरी साहित्यकी अमर थाती हैं। ये एक समान हिन्दू, मुसलमान, बच्चे, बूढ़े तथा युवक-युवतियोंकी जिह्वाओंपर बहुत समयसे थिरकते आए हैं और थिरकते रहेंगे। लल्लेश्वरीके ये वाक्य असीम अध्यात्म ज्योतिसे जगके कण-कणको जगमगा रहे हैं। इस काव्यमें योग-दर्शन, शैव-दर्शन एवं वेदान्तके उच्च सिद्धान्तों तथा अकाटच तथ्योंका प्रतिपादन किया गया है। विभिन्न विद्वानोंने लल्लेश्वरीके वाक्योंका संग्रह किया है और इनका विभिन्न भाषाओंमें अनुवाद भी किया है; जैसे—श्री राजानक भास्कराचार्यने संस्कृतमें, श्री ग्रियर्सन साहब तथा श्री रिचर्ड टेम्पुल साहबने अँग्रेजीमें तथा श्री सर्वानन्द चराग़ी एवं श्री गोपीनाथ रैणा आदिने हिन्दी तथा उर्दूमें अनुवाद किया है। उदाहरणार्थ लल्लेश्वरीके कुछ वाक्य इस प्रकार हैं:—

अ॒मुय अकुय अख्युर प॒रुम।
सुय हा मालि र॒टुम व॒न्दस मन्ज़्।
सुय मालि कॅन्ि प्यठ ग॒रुम तु॒च॒रुम
आ॒सुॅस सरतल तु॒ सपन्यिस स्वन॥

[मैंने एक ही अक्षर "ओइम्" पढ़ा। उसे ही अपने हृदयमें स्थान दिया। उसे ही मैंने (मनकी) शिलापर निखारा, सँवारा। मैं पीतल थी और (अब) स्वर्ण बन गई।]

दीव वटा दीवर वटा।
हेरि बोॅनुं छुय यीक वाठ।
पूज़ कस करख हूॅठ बटा?
कर मनस तुं पवनस संगाठ।

[देवता भी पत्थरका है और देवालय भी। (इसका) ऊपरसे नीचे तक एक ही जोड़ है। अरे हठी ब्राह्मण! किसकी पूजा करोगे? तुम अपने मन और प्राणोंका जोड़ करो।]

गवरू शबदस युस यछ-पछ बरे।
ज्ञानुँ वगि रटि च्यथ तोरुँगस।
यन्दरे'य शेमरिथ तुँ आनन्द करे।
अदुँ कुस मरे तुँ मारन कस?

[जो गुरु-शब्द पर दृढ़ निश्चय एवं विश्वास करे। जो ज्ञानकी लगामसे चित्त-तुरगको अपने अधीन करे। जो इन्द्रियोंका शमन करके आनन्दसे बैठा रहे। फिर कौन मरेगा और किसे मारेंगे?]

लल्लेश्वरीके पश्चात् शेख नूरुद्दीन वलीका नाम आता है। शेख साहबको लोग नुन्दर्योशके नामसे पुकारते थे। इनका समय सन् १३७७ ई. से १४३८ ई. तकका माना जाता है। ये लल्लेश्वरीके समसामयिक माने जाते हैं। इनकी आयु लल्लेश्वरीसे काफी कम थी। इनकी वाणी सदाचार, ज्ञान तथा भक्तिसे ओतप्रोत है। इनकी रचना "र्येशनामा" या "नूरनामा" है। इनकी रचनाके दो-एक उदाहरण इस प्रकार हैं:—

केंच़न द्युतुथ येतिक्यहो तते।
केंच़न येति नतुँ तते क्याह?
केंच़न रा'च़ क्युत गाह प्योव वते।
केंच़न मन्दिञ्जेन गटुय गाह॥

[कइयोंको इहलोक और परलोक—दोनोंमें (सुख) दिया। कइयोंको यहाँ कुछ न मिला, वहाँ क्या मिलेगा? कइयोंके रास्ते रातमें भी चमक उठे। कइयोंको मध्यान्हमें ही तमने घेरा।]

आशख सु युस अशकुँसूँत्य दज़े।
स्वन ज़न प्र'ज़ल्यस पनुनुय पान।
अशकुन नार यस वा'लिजि सज़े।
अदुँ मालि वाती सुय ला मकान॥

[प्रेमी वह जो दहके प्रेमानलसे,
चमक उठे सोने-सा जिसका गात।
प्रेमज्योतिसे जब उर आलोकित हो जाए,
तब (साधक) वह पहुँचेगा अनन्तके पास।]

महावतार कश्मीरीके प्रथम प्रबन्ध काव्यकार हैं। इन्होंने १५ वीं शताब्दी, ज़ैन-उल-आबिदीन बडशाहके समयमें, "बाणासुरवध" नामक प्रबन्ध काव्य लिखा। इनका समय सन् १४२० ई. से सन् १४७० ई. तकका माना जाता है। कहा जाता है कि बडशाहके समयमें ही महसोम तथा योधभट्टने कश्मीरीमें क्रमशः "ज़ैनचर्येथ"

और "जैनविलास" लिखा था। ये दोनों रचनाएँ अप्राप्य हैं। उपरोक्त तीनों रचनाओंमेंसे "बाणासुरवध" ही बच पाया है। इस काव्यके एक नमूनेका अवलोकन कीजिए :—

शुनेत् वनों कुम्भाजे बाणस्
आनोत् मङ्गेत् कित् विनाश्
युद्ध महा दुस्सह ए पानसे
चल देवा अपवचन म भाष्।।

[सुनकर कहा कुम्भजने बाणको
लाया तू—माँगकर विनाश।
युद्ध महा दुस्सह यह ; अपने आप
चला जा, देवको अपवचन मत कह !
—प्रो० 'पुष्प']

कालान्तरमें कश्मीरी कवितामें गीति-काव्यका प्रादुर्भाव हुआ। दार्शनिक एवं रहस्यवादी कविता तो आगे बढ़ती ही गई; परन्तु साथ ही गीति-काव्यकी एक विशेष विधा भी विकसित होने लगी। जिसे नेह-गीतका नाम दिया गया। इसमें संगीतकी प्रचुरता, कमालकी मार्मिकता और आत्म-निवेदनकी कोमलता पराकाष्ठा को पहुँची। इन नेह-गीतोंमेंसे अधिकांश अज्ञात कवियों द्वारा रचे गए हैं। इनकी ये रचनाएँ तक मौखिक पररम्परा द्वारा पहुँची हैं। इन अज्ञात कवियोंके कुछ नेह-गीत "कश्मीरी मौसीकी" के संग्रहोंमें भी संग्रहीत हैं।

इन नेह-गीतोंके प्रसिद्ध एवं प्रतिनिधि रचनाकार हैं—१. हब्बा खातून और २. अरणिमाल।

हब्वा खातून एक साधारण कृषक-कन्या थी। इसका समय सोलहवीं शताब्दी बताया जाता है। कहा जाता है कि हब्वाके माँ-बापने हब्वाका ब्याह अल्पायुमें ही एक जाहिल किसानसे कर दिया था। ससुरालमें कवि-हृदय सुन्दर हब्वाको सास-ननदके उलाहने और पतिकी झिड़कियाँ मिलीं। हृदयहीन पति पाकर वह दिल मसोसकर रह गई। इस प्रकार हब्वाका वैवाहिक जीवनारम्भ पीड़ासे हुआ। कुछ कालोपरान्त वह सुन्दर कवयित्री कश्मीरीके तत्कालीन राजा युसुफशाह चककी प्रेयसी बनी। तब उसका समय सुखसे कटने लगा। पर नियति हब्वाका यह सुख देख न सकी। विलासप्रिय युसुफशाह चकको सम्राट् अकबरके आदेशानुसार राजबन्दी बनाकर कलकत्ता भेज दिया गया। बेचारी हब्वा विरह-व्यथासे छटपटाती रही और यही विरह-व्यथा अन्त तक उसके जीवनकी संगिनी बनी रही।

हव्वा खातूनकी कविता उसकी उपरोक्त तीन जीवन अवस्थाओंसे प्रभावित है। कश्मीरी कविताके छन्द-विधानको इसने परिष्कृत किया और "फारसी बहरों" का सहारा लेकर संयत छन्द-विधानकी स्थापना की। हव्वाकी कविता सहज प्रवाहमयी, हृदयस्पर्शी एवं संगीतमय है। कहा जाता है कि इसने "कश्मीरी मौसीकी" के पहले संग्रहका सम्पादन भी किया था। हव्वाके अनेकों परवर्ती कवियोंने इस काव्यसे प्रभावित होकर इसका अनुकरण किया तथा प्रेरणा प्राप्त की। इसके वाक्यके दो-एक नमूने इस प्रकार हैं:—

लसुँ कमि हावसय
सु नय छु ह्यवान
नाव तुँ नसय।
अरफा छुँ आलुँमसय
ईद छय आशिकसय
यारस रॊस्त ईद कॊसय?
अन्दरी अन्दरी ज़ा'ज्यनसय
तॊन्दरस ला'ज्यनस
मा'ज़स गोम बसुँबसय।
शीन ब़न गा'ज्यनसय
आरन बा'ज्यमसय
जोयन ला'ज्य नसय।

[जिऊँ किस वांछासे सखि री!
उनको मेरी सुधि बिसरी।
मना रहा है यह जग "अर्फा"
प्रेमी "ईद" मनाते:
सभी दुखोंको भूल
सुखोंसे जोड़ रहे हैं नाते।
मनके मीत नहीं आएँ तो—
उन बिन ईद कहो कैसी?
भीतर ही भीतरसे मुझको
फूंका विरह-अनलने।
धधक रही भट्ठीमें झोंका
हा! निर्मोही पियने!
जली गातकी बोटी-बोटी—
निरखो, राख हुई कैसी!

उस निष्ठुरने हिमकी नाँईं
गला दिया है मुझको।
निर्झरवत् लो पटक-पटककर
रुला दिया है मुझको।

छीना मेरा चैन कि अब—
वेकल हूँ मैं सरिता जैसी!]

× × ×

डचुकुँ प्यठुं गुमुंछिम मोख्तुं जम हरान
बाल छस कराम कोसमन क्राव।

शालुॅमा'र बिहिथ प्यालुं छस बरान
बुं डालुं छस निवान यूर्यवात्यम यार
यारस किच्ॅ पोशन नालुं छस करान
बाल छस कराम कोसमन क्राव॥

इशब'र बिहिथ शीशि छस बरान
बुं कीश छस पारान यूर्य वात्यम यार
यारस किच्ॅ पोशन मालुं छस करान
बाल छस करान कोसमन क्राव॥

[ढुलक-ढुलक पड़ते मोती-से मेरे इस माथेके श्रम-कण
चुन रही कुसुम मैं प्रियके कारण।

'शालिमार' में चषक सुरासे भरती जाती
प्रिय आएँगे इसी खुशीमें हँसती, गाती।
उनके लिए बनाती हार सुपुष्पोंके, (हैं पुलकित तन, मन।)
चुन रही कुसुम मैं प्रियके कारण॥

'इशबर' में मैं कितने ही लो जाम सजाती
अपने ये काले-काले-से केश बनाती।
फूलोंकी मालाएँ गुँथती, आएँगे कि हमारे साजन।
चुन रही कुसुम मैं प्रियके कारण॥]

अरणिमाल फारसीके प्रसिद्ध कवि, "बहरे तवील" के रचनाकार— मुन्शी भवानीदास काचरूकी पत्नी थी। इनका समय अठारहवीं शताब्दी बताया जाता है। अरणिमाल अपने पतिसे जितना प्यार करती थी, उतना ही वह उसके प्रति निर्मम था। इस निष्ठुर पतिने अपनी सुकुमार हृदयवाली पत्नीको त्याग दिया

था। पतिके इस निष्ठुर व्यवहार एवं विछोहने कवयित्रीके उरमें पलकर गीतोंका रूप धारण कर लिया। उसके गीतोंमें वही माधुर्य, वही मार्मिकता और आत्म-समर्पण की मंजुल भावना है, जो मीराके गीतोंमें है। मीराकी भाँति ही अरणिमाल भी 'दर्द दीवानी' थी। उसके गीत कश्मीरी-काव्य-साहित्यमें बेजोड़ माने जाते हैं। उसके गीत कश्मीरी मौसीकीके हृदयहार हैं। यज्ञोपवीत संस्कार तथा विवाह आदि पर कश्मीरीमें जो लोक-गीत गाए जाते हैं, उनमेंसे अधिकांश अरणिमालके ही रचे हुए बताए जाते हैं। प्रोफेसर 'पुष्प'जीके मतानुसार "परवर्ती कश्मीरी कवितापर अरणिमालका जितना व्यापक प्रभाव पड़ा है, उतना किसी भी कश्मीरी कविका नहीं पड़ा। और तो और १९ वीं शतीके जिन कश्मीरी कवियोंने फारसी प्रेमाख्यानोंका सहारा लेकर रचना की, उनके गीति-काव्यपर भी अरणिमालकी छाप स्पष्ट है।"

इनके काव्यका एक उदाहरण देखिए :—

म्ये शोकुं यारें सुन्दि बर्यमस-प्यालुं तुं
आलव दी तो से।
तरवनि मरगे वसवनि बालुँ तुँ
आ'ही नीतो से।
वयाह करुँ नीयिनम हरननि छाल तुँ—
आलव दी तो से।
कन्दुं तय नाबदुँ बर्यमस थालतुं—
र'गुँ र'गुँ नी तो से।
जोद गव आशिक़न ६ोद क्यथुँ चाल तुँ
आलव दी तो से।

[प्रियके लिए भरे मधु प्याले
री सखि, उन्हें बुलाओ तो
जहाँ कहीं भी बैठें हों वे, मेरी यह मनुहार
शैल तराईके आँचल, या मैदानोंके पार
पहुँचे उनके पास; सुनें वे—मेरी पुकार।
हाँ, मंगल कामना नेहमय
सखि, उन तक पहुँचाओ तो।
उछल-उछल चंचल मृग-से वे चले गए किस ओर—
मुझे अकेली छोड़ न जाने; जाऊँ अब किस ठौर?
छाया तम जीवनमें मेरे—आते ही क्यों भोर?
मेरी इस गीली वाणीको
कोई उन्हें सुनाओ तो।

सजा रखे मैंने कितने ही, मधु मिश्रीके थाल
पहुँचा दो लघु भेंट उन्हें री, कर लो मुझे निहाल।
मेरे अंग-अंगमें सिहरन, होती है इस काल।

कैसे विरह-व्यथा मैं सह लूँ
उनको यह समझाओ तो।]

इनके अतिरिक्त मिर्ज़ा अकमल-उद्दीन, ख्वाजा हवीबुल्लाह नवशहरी आदि कवियोंने भी अच्छी कविताएँ रचीं। मुगल कालमें ही रूपभवानी [अलक्ष्येश्वरी सन् १६२५ ई. से सन् १७२१ ई. तक] ने अध्यात्मवादी कविताएँ लिखीं। इनकी रचनाओंमें काफी दुरूहता है और इनमें संस्कृत, फारसी तथा उर्दू आदिकी काफी मिलावट है। लल्लेश्वरीकी भाँति इनकी वाणीमें भावमयता नहीं है।

अठारहवीं शताब्दीके पिछले वर्षों तक उन्नीसवीं शताब्दीमें कश्मीरी कविताकी वहुत प्रगति हुई। इस कालमें कश्मीरी कवितामें वैविध्य आ गया। मुक्तक काव्यके साथ-साथ इस कालमें प्रवन्ध-काव्य भी रचा गया। (हालाँकि कश्मीरी प्रवन्ध-काव्यका आरम्भ पन्द्रहवीं शताब्दीमें हो चुका था।) प्रोफेसर जियालाल कौलके मतानुसार उक्त कालके दो भाग किए जा सकते हैं—पहले भागका प्रतिनिधित्व महमूद गामी तथा उनका सम्प्रदाय करता है; और दूसरे भागका प्रतिनिधित्व महाकवि परमानन्द तथा उनके शिष्य करते हैं। यहाँ इस वातका उल्लेख करना भी नितान्त आवश्यक है कि अब तक कश्मीरमें फारसीका प्रचार-प्रसार काफी मात्रामें हो चुका था, अतः कश्मीरी कवियोंने इसके प्रभावस्वरूप फारसीके छन्दों, मुहावरों तथा शव्दों आदिको अपना लिया।

इस कालके मुक्तक काव्यमें प्रधानतः रहस्यवाद तथा धार्मिक उद्गारोंकी ही अभिव्यक्ति हुई है। इस विधाके प्रमुख कवि हैं—करम वुलन्द खाँन, शाह गफूर, स्वछ ग्राल, महमूद गामी, हसन सूफी, मकबूल शाह,परमानन्द, शामस फकीर, रहमान डार, वहाव खार, अव्दुल अहद 'नादिम' और कृष्ण राजदान आदि। इन कवियोंने संकीर्णता एवं कट्टरतापर काफी चोटें की हैं। इन कवियोंकी रचनाएँ वेदान्त, शैवदर्शन तथा तसव्वुफसे वहुत प्रभावित हैं। इस सन्दर्भमें शमस फकीरकी दो पंक्तियाँ उद्धृत करना काफी होगा :—

"·····तुर्या सुषुफ, स्वपुन ज़ाग्रती
देवातुˇ कवुˇ ज़ानो;
शमस फकीरो! गम ख्य अती,
लो लती लो····"

[.....तुरीया, सुषुप्ति, स्वप्न और जागृति
मैं दीवाना क्या जानूँ?
रे शमस फकीर! यहीं पर ग़म खा (चिन्तन कर)
ओरी! ओरी! ओ.....]

महमूदगामी वेरी नागके निकटके एक गाँव 'डूरू' के रहनेवाले थे। इनका जन्म कब हुआ, इसके विषयमें प्रामाणिक रूपसे कुछ कहा नहीं जा सकता। हाँ, इनका निधन सन् १८५५ ई. में हुआ था। इन्होंने मुक्तक तथा प्रवन्ध–दोनों प्रकारके काव्य लिखे। इनकी गजलें स्पष्ट रूपसे फारसी तसव्वुफसे प्रभावित हैं। इनके रचे प्रवन्ध-काव्य हैं—'यूसुफ-जुलेखा', 'शीरीं खुसरो' और 'लैला व मजनूँ'। ये प्रवन्ध प्रेमाख्यान हैं।

इन कृतियोंका उद्देश्य जायसी आदि प्रेममार्गी कवियोंकी तरह ही लौकिक प्रेम द्वारा आध्यात्मिक प्रेमकी उद्‌भावना करना है। प्रेमाख्यान काव्यकारोंमें मकवूलशाह क्रालवारी [सन् १८२० (?)—सन् १८७६ ई.] का भी अपना स्थान है। इनकी कृति 'गुलरेज़' काफी लोकप्रिय हुई है। "गुलरेज़" की प्रेमाभिव्यक्ति, प्रकृति तथा करुणाका चित्रण हृदयस्पर्शी है। वली उल्लाह मत्तू तथा "रज़ीफ" की सहकारी कृति "हियमाल" तथा अन्य भाषाओं—फारसी, उर्दू, अरवी तथा पंजाबी आदिके रूपान्तर 'किस्सए–खंजरि इश्क', 'जौहरि इश्क', 'ज़ेवा निगार', 'गुलवकावली', 'सोहनी मैहवाल' तथा 'मुमताजि़ बेनज़ीर' आदि स्तरीय एवं प्रसिद्ध कृतियाँ हैं। कुछ ऐसी भी कृतियाँ हैं, जो मात्र अनुवाद नहीं; अपितु कुछ मौलिकता लिए हैं। ये हैं— 'कलील-व-दिमनु', 'हारून रशीद', 'सुलतान महमूद गजनवी', 'गुरवा-व-मोश' तथा 'हातम तय'।

कश्मीरीमें कुछ ऐसे खण्डकाव्य हैं जो समाज पर व्यंग्य करनेके साथ ही शिक्षाप्रद भी हैं। ये व्यंग्यप्रधान खण्डकाव्य कश्मीरियोंमें काफी लोकप्रिय रहे हैं। इन खण्डकाव्योंमें 'ग्रीस्त्य नामु', 'मोकदम नामु', 'पीर नामु' और 'मल्लु नामु' उल्लेखनीय हैं।

वहाव वरेके 'शाहनामा' का उल्लेख करना यहाँ वांच्छनीय है। वहावकी यह कृति मूल फारसी 'शाहनामा' का अनुवाद मात्र नहीं; अपितु "कई बातोंमें एक स्वतन्त्र रचना है—विशेषकर युद्धोंके वर्णनोंमें और अपने समयके वस्तु-चित्रणमें।"

—(प्रो. 'पुष्प')।

वहावके बादके जंगनामोंमें कर्बलाके बारेमें लिखी गई मर्सियाँ इस विधाका अच्छा उदाहरण है।

कश्मीरकी मार्मिक करुण लोककथा 'अकनन्दुन' भी अनेक कश्मीरी-कवियोंके काव्यका विषय रही है। इनमेंसे रमजान भट्टका 'अकनन्दुन' उल्लेख्य है। इसमें मातृ-स्नेह, असीम वेदना तथा उल्लासका मार्मिक चित्रण हुआ है।

महाकवि परमानन्द कश्मीरी काव्यकी "लीला" नामक विधाका प्रतिनिधित्व करते हैं। आपका जन्म सन् १७९१ ई. में और निधन सन् १८७९ ई. में हुआ। आपने एक मकतबमें फारसी तथा उर्दूकी शिक्षा पाई थी। आपकी रचनाएँ अतीव सरस एवं मार्मिक हैं। प्रवाहमयता आपकी रचनाओंका विशेष गुण है। आपने कश्मीरीके साथ-साथ कई हिन्दी कविताएँ भी लिखी हैं।* मुक्तक काव्यके अतिरिक्त आपने तीन प्रबन्ध-काव्य 'शि'वु'ल'ग्न', 'राधा स्वयंवर' और 'सु'दाम चर्यथ' लिखे हैं। 'सुदाम चर्यथ' कश्मीरी साहित्य एवं अपने विषयका सुन्दरतम काव्य है। यहाँ यह बताना असमीचीन न होगा कि १७वीं शताब्दीमें साहिब कौल (निधन सन् १६४२ ई.) ने 'कृष्णावतार' नामक प्रबन्ध काव्य लिखा। इस काव्यका कृष्ण-सुदामा प्रसंग काफी अच्छा बन पड़ा है; परन्तु यह 'सु'दाम चर्यथ' की टक्करका नहीं हो पाया। 'सु'दाम चर्यथ' में रूपकों द्वारा जीवात्मा और परमात्माका मिलन दिखाया गया है। यहाँ सुदामा–जीव, कृष्ण–परमात्मा तथा सुशीला (सुदामाकी पत्नी)–सद्वृत्ति है। आपकी भाषा संस्कृतकी पुट लिए हुए है; परन्तु आपने संस्कृत शब्दोंका कश्मीरीके साथ इस प्रकार प्रयोग किया है कि वे कश्मीरीके ही शब्द लगते हैं। आपकी कविताओंमें भाव गाम्भीर्य पराकाष्ठाको पहुँचा है। आपकी कविता मधुर संगीतमय, अनुप्रास, यमक तथा श्लेष आदि अलंकारोंसे भूषित है।

परमानन्दके प्रिय शिष्य थे लक्ष्मन जुव बुलबुल। आप नागाम नामक गाँवमें सन् १८१२ ई. में जन्मे थे। फुटकल 'लीला काव्य' के अतिरिक्त आपने "नलदमन" नामक प्रबन्ध-काव्य भी लिखा है। आपकी कविताएँ कहीं-कहीं अपने गुरुसे भी अधिक सरस बन पड़ी हैं। आपका निधन सन् १८८४ में ई. हुआ।

महाकवि परमानन्दके दूसरे शिष्य श्रीकृष्णदास (कृष्ण राज़दान) 'लीला-काव्य' के एक अच्छे कवि हैं। फुटकल रचनाओंके अतिरिक्त आपने भी 'शिवलग्न' नामक एक प्रबन्ध-काव्य लिखा है। यह प्रबन्ध-काव्य संस्कृत अनुवाद सहित सन् १९१३ ई. में एशियाटिक सोसायटी, कलकत्ता द्वारा प्रकाशित हो चुका है।

प्राप्त सामग्रीके आधारपर कश्मीरी-काव्यमें राम-कथाका सूत्रपात प्रकाशराम (दिवाकर प्रकाश) (निधन सन् १८८५ ई.) के 'रामवतार चर्यथ' से होता है। प्रकाश राम 'कुर्यगाम' नामक गाँवके रहनेवाले थे। ये फारसीके भी अच्छे विद्वान् थे।

---

*देखिए रा. भा. प्र. समिति, वर्धा द्वारा प्रकाशित 'रजत जयन्ती ग्रन्थ' के पृष्ठ २२६ और २२७।

'रामावतार चर्यंथ' में सीताको मन्दोदरीकी बेटी एवं महामायाका अवतार तथा कुशको घासके एक तिनकेसे उत्पन्न हुआ बताया गया है। इस कृतिपर फारसी छन्दों तथा 'रज़्मिया' शायरीका काफी प्रभाव परिलक्षित होता है। इसकी भाषा वर्णनानुकूल एवं सन्तुलित है। हाँ, 'दपुस तम्य' (उसने कहा) का बीसियों बार प्रयोग ठीक नहीं जँचता है। वेदना-भावको जाग्रत करनेमें कविको आशातीत सफलता मिली है।

परवर्ती राम-काव्योंमें 'शंकर रामायण', 'विष्णु प्रताप रामायण' तथा 'रामायण शर्मा' (जिसका उल्लेख आगे किया जाएगा) प्राप्य है।

उपरोक्त महमूद गामीके शिष्योंमें रसूल मीर (निधन सन् १८७० ई.) का नाम आता है। ये रहस्यवादसे प्रभावित न होकर लौकिक प्रेमकी अभिव्यक्ति करने लगे। इनके ये प्रेम-चित्र काफी माँसल बन पड़े हैं। इनकी कई गज़लोंमें रूप-चित्रण कमालका हुआ है। आधुनिक कालके कई कश्मीरी कवि रसूलसे प्रभावित हैं।

कश्मीरी काव्यके आधुनिक कालका आरम्भ 'महजूर' से हुआ। 'महजूर' से पहले कश्मीरी काव्यमें गतिरोध आ गया था, परन्तु 'महजूर' की प्रतिभाने कश्मीरी काव्यको पुनः गति देकर एक नई दिशा दी। इस कारण यदि हम कश्मीरी काव्यके आधुनिक कालको 'महजूर काल' कहें, तो कोई आपत्ति नहीं होनी चाहिए।

गुलाम अहमद 'महजूर' पुलवामाके 'म्यत्रुँगोम' नामक गाँवमें सन् १८८५ ई. में उत्पन्न हुए थे और इनका निधन सन् १९५२ ई. में हुआ था। इन्होंने अपनी गज़लोंमें गुल और बुलबुलके प्रतीकोंमें एक अर्थगाम्भीर्यपूर्ण ध्वनिकी उद्भावना की और कश्मीरी कविताको अभिनव विषय प्रदान किए, जिनका संकेत उनकी 'ग्रीस्तिकूर', 'वुँथो हा बाग़वानो!' और 'गुलशन वतन छु सोनुय' आदिमें मिलता है। 'ग्रीस्तिकूर' एक रोमानी कविता है। यह कविता इतनी सशक्त एवं मधुर है कि इसी कविताने विश्वकवि गुरुदेव रवीन्द्रनाथ ठाकुरका ध्यान महजूरकी ओर खींचा था। 'कॉशुँर ज़नानुँ' नामक कवितामें 'महजूर' ने कश्मीरी नारीकी बेबसी और उसके मूक उच्छ्वासोंको कलात्मक ढंगसे सँजोया है। प्राकृतिक और रोमानी चित्रणोंके साथ ही महजूरने जागरण और क्रान्तिके सप्राण गान भी गाए हैं। इन्होंने साम्प्रदायिक एकतापर भी बहुत जोर दिया है। सुनिए :—

····मशीदन मन्दरन गिर्यजन,
दरमसालन तुँ अस्तानन।
यिमन ईत्यन घरन अचनुक
अकुय दर्वाज़ुँ थावुन छुम····

[मस्जिदों, मन्दिरों, गिरजों, धर्मशालाओं और आस्तानों—इतने घरोंमें प्रविष्ट होनेका मुझे एक ही द्वार रखना है।]

'महजूर' कश्मीरी काव्यको अकेले ही घिसी-पिटी लीकसे एक नूतन प्रगति मार्गकी ओर लगभग उस समयतक ले जाते रहे, जबतक अब्दुल अहद 'आज़ाद' (रांगिल वड़गाम निवासी) उससे न जा मिले। 'आज़ाद' एक सचेत साहित्यसृष्टा थे। इन्होंने साम्प्रदायिक, सामाजिक एवं जातिगत संकीर्णताओंके विरुद्ध अपनी लेखनी उठाई। इन्होंने मानवता, देशभक्ति आर्थिक समता आदि विषयोंको भी अपने काव्यका विषय बनाया। आरम्भमें 'आज़ाद' उर्दूके सुप्रसिद्ध कवि 'इक़बाल' से बहुत प्रभावित रहे और उन्हींकी कृति 'नालये इब्लीस' के अनुकरणपर 'शिकवये इब्लीस' लिखा। 'आज़ाद' के मानवतावादसे प्रभावित होकर अन्य कवियों—फानी, आसी, नाज़ आदिने भी इस विषयको अपना लिया। रहस्यवादी धाराके कवि मास्टर जिन्दा कौल (जन्म सन् १८८४ ई.) भी इस प्रभावसे अछूते न रहे। उन्होंने भी 'करनावितारख ना अपोर' और 'वदिहे मनुश च्यथि हे नु ओ श' नामक कविताएँ मानवतावादी स्वरकी पुष्टिमें लिखीं। 'मास्टरजी' की कविताएँ "स्मरण" नामक पुस्तकमें संग्रहीत हैं। इस संग्रहपर 'मास्टरजी'को साहित्य अकादमी द्वारा पाँच हजार रुपएका पुरस्कार मिल चुका है। आपकी कविताएँ मर्मस्पर्शी, सहज प्रवाहयुक्त एवं भाव गाम्भीर्ययुक्त हैं।

आधुनिक कश्मीरी भक्ति-साहित्यके शीर्षस्थ कवि पण्डित नीलकण्ठ शर्मा (जन्म सन् १८८८ ई.) ने कश्मीरी साहित्यकी अनेक विधाओंको अमर देन दी है। आपने भक्ति, ज्ञान, वैराग्य सम्बन्धी सुन्दर भजन (लीला काव्य), महाकाव्य, नाटक तथा संस्कृतकी कई सुन्दर कृतियोंका अनुवाद किया है। कविकी महत्वपूर्ण कृति 'रामायण शर्मा' (कश्मीरी रामायण) है। मुझे लगता है कि पूर्ववर्ती तीनों—'राम चर्यथ' आदि—रामायणोंसे 'रामायण शर्मा' कला एवं कवित्वकी दृष्टिसे श्रेष्ठ है। 'अन्य काव्यगत विशेषताओंके अतिरिक्त इस (महान) कृतिमें युद्ध-चित्रण अत्यन्त सजीव हुआ है। प्रोफेसर महीउद्दीन हाजिनीके मतानुसार श्री शर्माजी कश्मीरी साहित्यके चार बड़े 'रज्मगो' कवियोंमेंसे एक हैं।' श्री शर्माजीका 'सुधा-सिन्धु' नामसे श्रीमद्भगवद्गीताका पद्यानुवाद बहुप्रशंसित कृति है।

स्वतन्त्रता प्राप्तिके बाद कश्मीरी कविताने बहुत-सी करवटें लीं। दीनानाथ 'नादिम' (जन्म सन् १९१६ ई.) ने इसे प्राणवान बनाकर एक नया मोड़ दिया। कश्मीरी कविताको नव्य छन्द-विधान देनेवाले कवि 'नादिम' ही हैं। इनकी कविताओंमें पीड़ितों एवं शोषितोंके प्रति गहरी समवेदनाकी अभिव्यक्ति हुई है। आपने कश्मीरीमें कई सॉनेट भी लिखे हैं। आपने 'बम्बुर यम्बरज़ल' नामसे एक सफल गीति-नाट्य भी लिखा है। 'का'शिरिस शुर्य सुन्द तरानु" (कश्मीरी बच्चेका तराना) नामक कवितामें आपने कश्मीरकी नई पीढ़ीका दृढ़ संकल्प यों व्यक्त किया है :—

बनुन आशि रस्यत्यन हुन्जु'य छुम म्ये आश
अनुन गटु' ज़लिस मंज़ म्ये पज़रुक छु गाश
म्ये छम हरविज़्यन ज़िन्दगी हुन्द तलाश
बनिथ नूर करें जुलमतस लारें लार
लो कुंट छुस बॅ का'शुर म्ये नाव नवबहार।

[मुझे बे आसोंकी आस बनना है, अन्धकारमें सचाईकी ज्योति जगानी है। मुझे हर समय ज़िन्दगीकी तलाश है, आभा बन अत्याचारको दूर भगा दूंगा। मैं कश्मीरी बालक हूँ, मेरा नाम नवबहार है।]

रहमान 'राही' नूर मुहम्मद 'रोशन', मक्खन लाल 'बेकस', कामिल, 'प्रेमी', चमनलाल 'चमन' गुलाम नबी 'फिराक' आदि आजकलके सफल कवि हैं। रहमान 'राही' का काव्य संकलन 'नवरोजि सबा' के नामसे प्रकाशित हो चुका है। आपकी कविताएँ माधुर्य गुण सम्पन्न एवं मर्मस्पर्शी हैं। प्रो. 'पुष्प' के शब्दोंमें—"रूप, रस और गन्धके चित्र उभारनेमें 'राही' की चातुरीने उनकी रचनाओंको बहुत ही आकर्षक बना दिया है।"

'रोशन' एक होनहार कवि हैं। मुक्तक काव्यके अतिरिक्त इन्होंने संगीत रूपक भी लिखे हैं। इन्होंने अपनी अधिकांश कविताओंमें लोकगीत शैली तथा मुक्त छन्दको अपनाया है। कामिलकी 'मसमलुंर' नए प्रयोगोंकी दृष्टिसे एक महत्वपूर्ण रचना है। 'प्रेमी' ने लोकगीत शैलियोंमें नवयुगकी उमंगोंको कलात्मक ढंगसे सजाया है। 'चमन' का काव्य-संकलन 'शबनम्यशार' हाल हीमें प्रकाशित हुआ है। इस नवयुवक कविका भविष्य उज्ज्वल दिखाई देता है। 'फिराक़' का अपना विशेष अन्दाजे बयाँ है।

(२) गद्यका प्रारम्भ :

कश्मीरी गद्य कश्मीरी पद्यकी अपेक्षा बहुत पीछे है। ऐसा लगता है कि स्वतन्त्रता प्राप्तिके पहले कश्मीरी गद्य-लेखनकी ओर साहित्यकारोंने कुछ भी ध्यान नहीं दिया था। अस्तु—

कश्मीरी गद्यका आरम्भ कब हुआ? यह प्रश्न एक लम्बे शोधकी अपेक्षा रखता है। 'राजतरंगिणी' के अनुसार जैनुलाबिदीन बडशाहके समयमें महसोस तथा योधभट्ट नामक दो साहित्यकारोंने क्रमशः 'जैन चर्यंथ' तथा 'जैन विलास' नामक नाटक लिखा। बडशाहका समय पन्द्रहवीं शताब्दी था। अतः यदि इसी शताब्दीसे कश्मीरी साहित्यिक गद्यका आरम्भ मानें तो कोई अनुचित बात न होगी। यहाँपर यह बताना असंगत न होगा कि उपरोक्त दो कृतियोंका उल्लेख मात्र ही मिलता है। अभी तक ये दोनों कृतियाँ अप्राप्य हैं।

बीसवीं शताब्दीके आरम्भके वर्षोंसे कश्मीरी गद्य थोड़ी-थोड़ी मात्रामें लिखा जाने लगा। इसी कालमें मौलवी यिहाया साहवने 'तफसीरि कुरान' और नूरुद्दीन साहव कारीने धार्मिक रिवाजों पर प्रकाश डालनेवाली पुस्तक 'मिसाल' लिखी। कहा जाता है कि 'निहालपुर' नामक गाँवके एक दरवेश महीउद्दीन खाँनने कुरानिशरीफका कश्मीरी अनुवाद किया था। यह अनुवाद भी आज तक अप्राप्य है।

प्रो. महीउद्दीन हाजिनीका कहना है—"सन् १९३१ ई. सन् १९४० ई. तक सम्भवतः कश्मीरी गद्यमें केवल तीन पुस्तकें ही लिखी गई हैं। सन् १९३२ ई. में पण्डित आनन्द कौलकी दो पुस्तकें—(१) का'शिरि प्र'चु' (कश्मीरी पहेलियाँ) और (२) का'शिर्य महावरॅ (कश्मीरी मुहावरे) और मेरे द्वारा लिखी गई—'ग्रीस्त्य सुन्दग'रॅ' (किसानका घर)।"

सन् १९४७ ई. में तथा इसके वाद कश्मीरी गद्य, विकासकी डगर पर वढ़ने लगा। रेडियो कश्मीरकी स्थापना तथा कश्मीर कलचरल फ्रंट एवं मासिक कश्मीरी पत्रिकाओं 'क्वंग पोश' तथा 'गुलरेज़' के प्रकाशनसे कश्मीरी गद्यको काफी गति मिली। कश्मीरीमें पिछले वर्षोंसे अच्छी कहानियाँ भी लिखी जाने लगी हैं। कश्मीरके प्रसिद्ध कहानीकार स्वर्गीय प्रेमनाथ 'परदेसी' भी रेडियोके प्रभावसे कश्मीरीमें लिखने लगे थे। आधुनिक कश्मीरी कहानीकारोंमें अख्तर महीउद्दीन, 'वंसी निर्दोष', उमेश कौल, गुलाम मुहम्मद सूफी और औतार कृष्ण "रहवर" उल्लेखनीय हैं। अख्तर महीउद्दीनको अपने पहले ही कहानी-संग्रह "सथ संगर" पर साहित्य अकादमीका पुरस्कार मिल चुका है। वंसी 'निर्दोष' के दो कहानी संकलन—"वाल मरञ्यो", "आदम छु यिथय वदनाम"—प्रकाशमें आए हैं। "वाल मरञ्यो" पर इन्हें कश्मीर कलचरल अकादमीका सात सौ रुपएका पुरस्कार मिल चुका है। उमेश कौल उत्कृष्ट एवं परिमार्जित शैलीकी कहानियाँ लिखते हैं। गुलाम मुहम्मद सूफीका एक कहानी-संग्रह "लूस्य मृत्य तरिख" के नामसे प्रकाशमें आया है। "रहवर" की सुन्दर कहानियोंका संकलन "तवरुख" नामसे प्रकाशित हो चुका है।

ऐतिहासिक दृष्टिसे सोमनाथ जुत्शीका भी कश्मीरी कहानीकारोंमें अपना विशेष स्थान है।

अन्य कहानीकारोंमें नूर मुहम्मद रोशन, दीनानाथ नादिम, अमीन कामिल तथा मजवूर आदिके नामोंकी गणना होती है।

कश्मीरीमें उपन्यास अभी वहुत कम मात्रामें लिखे गए हैं। अख्तर महीउद्दीनने 'दोद दग़' और अमीन कामिलने 'गटि मंज गाश' नामक उपन्यास लिखे हैं। अली मुहम्मद लोनकी रिपोर्ताज शैलीकी पुस्तक 'अस्यति छि इनसान' भी प्रकाशित हो चुकी है।

कश्मीरी नाटककारोंमें अली मुहम्मद लोन, नूर मुहम्मद 'रोशन' और पुष्कर भान उल्लेखनीय हैं। प्रोफेसर हाजिनीने भी एक तीन अंकोंवाला नाटक

'ग्रीस्त्य सुन्द गरुँ' लिखा है। जगन्नाथ वलीने हब्बा खातूनकी प्रणय गाथापर आधारित 'जून' नामक नाटक लिखा है।

कश्मीरी गद्य कई दूसरी भाषाओंके अनुवादों द्वारा भी विकसित हो रहा है। इस दिशामें पण्डित नीलकण्ठ शर्माने महाकवि भासके संस्कृत नाटक 'स्वप्नवासवदत्तम्' का अनुवाद करके; प्रोफेसर हाजिनीने अरबीसे 'अलिफ लैला' का अनुवाद करके; तथा अख्तर महीउद्दीनने इब्सनके 'दि घोस्ट्स', टॉलस्टायके 'वार एण्ड पीस'; 'पुष्प' जीने थ्योरोके वाल्डन; रोशनने बर्नार्ड शॉ तथा प्रेमचन्दके 'एँपल कार्ट' तथा 'गोदान' का; दीनानाथ 'नादिम' ने शेक्सपियरके 'ऑथेलो' का; अमीन कामिल तथा अली मुहम्मद लोनने रवीन्द्रनाथ ठाकुरके 'डाक घर' तथा 'मुक्ताधारा' का; एवं सोमनाथ जुत्शीने इब्सनके 'वाइल्ड डक' का अनुवाद करके सराहनीय काम किया है।

कश्मीरी गद्यके प्रसंगमें कश्मीरी पत्र-पत्रिकाओंका नामोल्लेख करना समीचीन होगा। कश्मीरीका पहला पत्र "गाश" महजूरने अपने पुत्रके नाम पर निकाला था। इस पत्रिकाने कश्मीरी गद्यको गति देने एवं निखारनेका सराहनीय काम आरम्भ किया था; परन्तु एक वर्षके अन्दर-ही-अन्दर यह पत्रिका वन्द हो गई।

कश्मीर कल्चरल काँग्रेसकी ओरसे कश्मीरीकी एक और पत्रिका "क्वंग पोश" नामसे निकली। इस पत्रिकाने भी कश्मीरी गद्यकी काफी सेवा की; परन्तु इसे भी कुछ समयके वाद वन्द होना पड़ा। "वजमि अदव" की ओरसे एक और कश्मीरी-उर्दू पत्रिका "गुलरेज़" नामसे निकली थी। कुछ कालके लिए इस पत्रिकाका सम्पादन प्रो. हाजिनीके योग्य हाथोंमें था। इस पत्रिकाने भी कश्मीरी साहित्य—विशेषकर कश्मीरी गद्यकी काफी सेवा की थी; परन्तु जन्मसे तीन वर्षोंके अन्दर-अन्दर ही इस पत्रिकाकी भी वही दशा हुई जो अन्य दो पत्रिकाओंकी हुई थी। दिल्लीकी 'कश्मीरी वजमि अदव' से निकलनेवाली पत्रिका "पम्पोश" तथा कश्मीर सरकारके सूचना विभागकी ओरसे निकलनेवाली "तामीर" नामक पत्रिकामें भी कश्मीरी रचनाएँ छपा करती थीं।

सुननेमें आया है कि कश्मीरकी कल्चरल अकादमी अपनी उर्दू पत्रिका "शीराजा" कश्मीरीमें भी निकालने जा रही है। अकादमीका यह आयोजन स्वागतके योग्य है। इस प्रयाससे कश्मीरी साहित्य, विशेषतः कश्मीरी गद्य तरक्कीकी मंजिलोंको पार करेगा।

अन्तमें मैं यह कहना आवश्यक समझता हूँ कि कश्मीरमें कश्मीरी लेखकों और साहित्यकारोंको अनेक असुविधाएँ हैं; फिर भी यहाँ अच्छे साहित्यकारोंकी कमी नहीं है। अनेक कठिनाइयोंके वावजूद भी वे अपने कार्यमें अत्यन्त निष्ठा और हितैषणासे दत्तचित्त हैं!

• • •

परमानन्द

[कवि-परिचय]

[illegible] [illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

* * *

परमानन्द

• • •

कश्मीरी काव्य-रसिकोंमें ऐसा कोई न होगा जिसने महाकवि परमानन्दकी कविताओंका आस्वादन करके परमानन्द प्राप्त न किया हो। माँ सरस्वतीके इस वरद पुत्रका कश्मीरके सर्वोत्कृष्ट कवियोंमें अपना विशेष स्थान है। कश्मीरीकी "लीला काव्य" विधाके आप प्रवर्तक एवं प्रतिनिधि कवि माने जाते हैं।

मार्त्तण्ड (मट्टन) तीर्थसे लगभग तीन मीलकी दूरीपर "सीर" नामक एक गाँव है। यहाँ एक स्वामिन् भारद्वाज गोत्रीय कश्मीरी ब्राह्मण कृष्ण पण्डित अपनी धर्मपत्नी सरस्वतीके साथ रहते थे। इन्हींके यहाँ सन् १७९१ ई. में एक लड़का जन्मा, जिसका नाम नन्दराम रखा गया। यही नन्दराम कालान्तरमें काव्य-जगतमें परमानन्दके नामसे विख्यात हुए। इनके वास्तविक नाम—नन्दरामको भूलकर लोग इन्हें इनके उपनाम—परमानन्द—से ही याद करने लगे। कृष्ण पण्डितके दो और बेटे थे—ठाकुर पण्डित और सहज पण्डित। कृष्ण पण्डित मट्टन कसबेके पटवारी थे और 'सीर' से आकर सपरिवार मट्टनमें ही रह रहे थे।

कश्मीरमें मुसलमानोंके शासनसे फारसीका काफी प्रचार हुआ। कश्मीरी ब्राह्मण जो अपने गम्भीर संस्कृताध्ययनके लिए प्रसिद्ध थे; अब जीविकोपार्जनके लिए फारसी पढ़ने लगे। परमानन्दको भी फारसीका ज्ञान प्राप्त करनेके लिए गाँवके एक मुल्लाके पास भेजा गया, जहाँ इन्होंने फारसीका अच्छा ज्ञान प्राप्त किया। कहा जाता है कि परमानन्द फारसीमें भी कविता कर सकते थे। इन्होंने पहले-पहल

अध्यात्म शिक्षा अपने पिताजीसे ही ग्रहण की। इस बातका संकेत हमें कविकी वाणीमें भी मिलता है। वे लिखते हैं :—

सत-गु`र तु` बब म्योन श्री कृष्ण दीव।
त्रैलूकी छ दीह तु` सु छुस जीव।।

[मेरे सद्‌गुरु और पिता श्रीकृष्ण है। त्रिलोकी देह है और वे इस देहकी आत्मा हैं।]

कहा जाता है कि इनके कुल-गुरु, जो बहुत ही वृद्ध थे, विजविहारामें रहते थे। उन्होंने इन्हींसे या इनके सुपुत्र पण्डित आत्मारामजीसे षट्-चक्र उपासना या कुण्डिलिनी प्रयोगकी दीक्षा ली थी। बनारससे आए हुए एक परमहंस श्री स्वामी आत्मानन्दके सम्पर्कमें भी कवि परमानन्द बहुत समय तक रहे। अतः अवश्य ही उनसे भी उन्होंने अध्यात्म सम्बन्धी वार्ता या सतसंग किया होगा। कृष्ण पण्डितने स्वयं अपने लिए फारसी महाभारतकी नकल की थी और स्वयं परमानन्दजीने "उपनखत" (उपनिषदोंका फारसी अनुवाद जो दाराशिकोहने करवाया था) की एक प्रति अपने लिए बनाई थी। इन दोनों महान् कृतियोंको पढ़कर कवि परमानन्दजीने विशेष ज्ञान सम्पन्न किया, इसमें कोई सन्देह नहीं।

मार्त्तण्ड (मट्टन) भारतके मुख्य तीर्थोंमेंसे एक है। भारतके लगभग सभी प्रान्तोंसे यहाँ साधु, महात्मा एवं यात्री आते हैं। श्री अमरनाथ स्वामीकी पवित्र गुफाके दर्शनोंके निमित्त जो यात्री आते हैं, वे भी यहींसे गुजरते हैं; अतः मार्त्तण्डमें साधु-संन्यासियोंका सदा जमघट रहता है। इन साधु-महात्माओंके संसर्गमें परमानन्दजी अवश्य आए होंगे और उनके धार्मिक प्रवचनों एवं व्याख्यानोंसे उन्होंने अवश्य ही लाभ उठाया होगा। परमानन्दजी एक सिख साधुके सम्पर्कमें भी आए थे और उनसे उन्होंने "गुरु ग्रन्थ साहब" भी सुना था। हमारी इस बातका प्रमाण परमानन्दजीकी कई कविताओंकी हिन्दी-पंजाबी मिश्रित भाषा (जिसे वे स्वयं 'भाखा' कहा करते थे) है। देखिए :—

१. ....ना वेद आख सके ना भाषा।
२. मन कंसा तन मथुरा होंदा।
३. क्यों रोंदा किस कारण हासता।
४. ......असी सानू त्वाडी तुसी साडी मन
५. परमानन्दको भी ले चल साथ।
टुर न सके तुम पकड़ो हाथ।। आदि

इसके अतिरिक्त उनके 'राधा स्वयंवर' की एक हिन्दी कविता, जिसकी प्रथम पंक्ति "अपनी करनी पार उतरनी . . . .है।" में उन्होंने 'गुरु ग्रन्थ साहव' में संग्रहीत कवीरके एक पदकी दो पंक्तियाँ ज्यों-की-त्यों लिखी हैं। देखिए :—

"इख लख पोतु सवा लख नाते, जिस रावण घर देवा न बाते।"*

कहा जाता है कि परमानन्दजीके ही समयमें एक अच्छे साधु पण्डित टिकुँराम उनके पड़ोसमें रहते थे। ये साधु आयुमें परमानन्दजीसे काफी वड़े थे। ये साधु भी फारसी भाषामें भजन आदि रचा करते थे, अतः इनका प्रभाव भी कवि पर अवश्य पड़ा होगा।

परमानन्दजीका विवाह वचपनमें ही हुआ था। इनका विवाह मट्टनके ही एक दूसरे पटवारी, जो कृष्ण पण्डितके सहकार्यकर्ता एवं मित्र थे, की लड़कीसे हुआ था। कहा जाता है कि यह लड़की आयुमें परमानन्दजीसे कई महीने वड़ी थी। उसका नाम मालद्यद था। मालद्यद एक तेज मिजाजकी स्त्री थी। उसके इस स्वभावके कारण पास-पड़ोसकी स्त्रियाँ उससे काफी डरा करती थीं। वह महाकविको भी असांसारिक (धन-सम्पत्ति न वटोरने) पर झिड़कती थी। पत्नीके इस क्रूर स्वभावका कुछ भी प्रभाव महाकविकी शान्त एवं मधुर प्रकृतिपर न पड़ा। कभी-कभी वे अपनी पत्नीकी इस मूर्खतापर उसका मजाक भी उड़ाया करते थे। एक वार ऐसा हुआ कि इनके पड़ोसमें किसीकी मृत्यु हो गई और उस शवकी अर्थी अभी श्मशानमें नहीं पहुँचाई गई थी। इस समय परमानन्दजीने अपनी पत्नीसे खाना माँगा। मालद्यदने उन्हें खाना नहीं दिया और वोली—"जब तक पड़ोसमें शव पड़ा रहेगा, तब तक खाना खाना उचित नहीं।" परमानन्दजी (जो शाकाहारी थे) ने झट पत्नीपर चोट करते हुए उस टोकरीकी ओर जिसमें सूखी मछलियाँ पड़ी थीं, संकेत करते हुए कहा—"इतने शवोंके होते हुए यदि खाना खाना उचित है, तो पड़ोसमें पड़े एक शवकी उपस्थितिसे तुम क्यों घवराती हो?"

परमानन्दका शरीर स्वस्थ, सुन्दर एवं आकर्षक था। इनके शरीरकी एक अनुकृति प्राप्त हो गई है। इस अनुकृतिका चितेरा महाकविका ही एक शिष्य नारायण मुरचगर (मूर्तिकार) वताया जाता है। महाकविकी यह अनुकृति अभी भी उनके घरमें सुरक्षित है। इस अनुकृतिको देखनेसे ज्ञात होता है कि परमानन्दजीका भाल विशाल, आँखें (वादाम जैसी) आयत्त एवं चमकीली, नाक ऊँची, नुकीली और वक्ष एवं स्कन्ध विशाल थे। ये गम्भीर स्वभावके थे; परन्तु थे काफी विनोदप्रिय। कहा जाता है कि एक किसान और उसके कई आदमी किसी अन्यके विरुद्ध एक षडयन्त्र रच रहे थे। परमानन्दजीको इस षडयन्त्रके वारेमें जानकारी हो गई थी। एक दिन

***"इक लख पूत सवा लख नाती, ते रावण घर दिया न बाती।"**
—[कवीर, गुरु ग्रन्थ साहब।]

जब वही किसान परमानन्दजीके पास आया तो उन्होंने उससे उसी बातकी प्रगतिके बारेमें पूछा। किसानने उत्तर दिया—"महाराज, दला-दला छिस दिवान।" [महाराज ! यह (बात) विचाराधीन है।] इसपर महाकविने उत्तर दिया—"ओ यि छि दलु॑नु॑य हुंज़ का॑म।" अर्थात्—१. हाँ, इन बातोंपर अच्छी तरहसे विचार करना चाहिए। २. हाँ, यह तो दुराचारियोंका ही काम है !!! एक जगह इन्होंने भगवान कृष्णको भी आड़े हाथों लिया है। देखिए :—

"बाप हमारा कृष्ण हुआ हो, पिता तुम्हारा नन्द।
आपसमें क्या पहुँचोंगा हम, आप करो दरदाम॥"

[(हे कृष्ण !) मेरे पिताजीका नाम कृष्ण है और आपका पिता नन्द है (जो मेरा नाम है), अतः आपसमें हम क्या लगते हैं यह तो आप स्वयं ही बता सकते हैं।]

परमानन्दजी मदहम अच्छा बजा सकते थे। मदहम बजाते और भजन गाते हुए वे इतने आनन्दविभोर हो जाते थे कि मस्त होकर शरीरकी सुध भूलकर परमहंस भगवान श्री रामकृष्णजीकी भाँति, भावावेशमें नाचने लगते । ये अच्छा पहनते और अच्छा भोजन करते थे। जो चावल इनके लिए पकाए जाते थे, वे बढ़िया किस्मके हुआ करते थे, जिसका प्रबन्ध मट्टनका "मु॑कदम" (गाँवका प्रधान जो गाँवका भूमि-कर आदि इकट्ठा करता है) सालेह गनाई करता था। "उपनखत" की प्रति, जिसकी प्रतिलिपि स्वयं महाकविने तैयार की है, से पता चलता है कि इनकी लिपि अतीव सुन्दर थी।

जब परमानन्दजी पच्चीस वर्षके थे तभी इनके पिताजी परलोकगामी हुए। पिताजीकी मृत्युके पश्चात् परमानन्दजी उनके स्थानपर पटवारी नियुक्त हुए। "इस जमानेमें पटवारीको हेय दृष्टिसे देखा जाता था। उसपर विभिन्न प्रकारके अत्याचार किए जाते थे। परमानन्दजी भी उनके शिकार थे।....... उन्होंने अपने एक अफसर, मिसरा राधूमल, पर एक व्यंग लिखा है।" लिखते हैं :—

मिसरा छु॑ बे–नुक्तु॑ रोद,
वुनि छख यि दा॑दिस दोद।
विहिथ छु दुलरि ज़न।
हारान छु॑ तुलु॑रि ज़न
मटनु॑ छॆ खा॑हिश तस।
पठवा॑र्य दिन्य दर्मस।
थारान छि गारन कस॥
वन्यतव यि बही क्याह !
गयि न सही जाह॥

[मिसरा राधूमल एक वेलगाम और बिन्दीरहित पंक्ति है। ("मिसरा राधूमल" जब फारसी लिपिमें लिखा जाए तो इसमें कहीं बिन्दी नहीं आती, जैसे—

مسرا رادھومل

अब वह (पटवारियोंके लिए) एक और वला प्रमाणित हुआ जिस प्रकारसे भिड़े काटनेमें लगी हों। अब इसकी इच्छा है कि श्राद्धपर पटवारियोंको (गायोंके बदले) दान दे (क्योंकि पटवारी गायोंसे भी सस्ते मिलते हैं।) पटवारी बेचारे थर-थर काँप रहे हैं, क्योंकि वे सोचते हैं—पता नहीं इस कामके लिए किसे चुना जाए। आखिर बात क्या है कि पटवारियोंका "खाता" शुद्ध (Correct) नहीं समझा जाता।]

यह भी कहा जाता है कि एक बार परमानन्दजीको अपने एक उच्चाधिकारीके लिए मट्टनसे खनबल घाट तक एक बड़ी भेड़ कन्धोंपर ले जानी पड़ी थी। इस घटनाने भी एक लोकप्रिय कविताको जन्म दिया, जिसकी पहली दो पंक्तियाँ इस प्रकार हैं:—

त्राहि माम त्राहे पाहे मु॑र॑री
कट संकट ही ! मु॑क्ट॑ दा॑री।

[अर्थात्—हे मुर नामक असुरके शत्रु ! (कृष्ण), हे मुकट धारण करनेवाले—१. मेरा संकट काटो—दूर करो। २. इस भेड़ (उठानेके) संकटसे मुझे बचाओ।

यहाँ 'कट' शब्द श्लिष्ट है—काटो और भेड़के अर्थमें। मुझे लगता है कि उपरोक्त पंक्तियोंमें कविने 'मुरारी' सम्बोधन जान-बूझकर लगाया है, क्योंकि इस शब्दसे ध्वनित होता है कि हे कृष्ण, जिस प्रकार आपने 'मुर' जैसे दुष्टोंका संहार किया, वैसे ही इन (हमारे अधिकारी) दुष्टोंका भी संहार करो, क्योंकि ये लोग भी सज्जनोंको बहुत सताते हैं। 'मुरारी' शब्द कहकर कवि भगवानको याद भी दिलाते हैं कि आपने दुष्टोंका सदा संहार किया है।]

अपने जीवनके अन्तिम वर्षोंमें परमानन्दजीने पटवारीके पदसे त्याग-पत्र दिया। त्याग-पत्र देनेका प्रधान कारण यह रहा होगा कि परमानन्दजी अब अपना सारा समय भगवद्-ध्यान एवं चिन्तनमें ही बिताना चाहते थे। इस बातका प्रमाण यह है कि नौकरीसे त्याग-पत्र देनेके बाद वे पन्द्रह वर्षों तक अपने आसनको छोड़कर कहीं बाहर न गए। वे केवल भगवद्चिन्तन, ध्यान एवं ऐसी ही अन्य क्रियाओंमें लगे रहे। यही वह समय था, जब महाकवि, बनारसके संन्यासी परमहंस स्वामी आत्मानन्दजीके निकटमें रहे। कहा जाता है कि ये दोनों महीनों तक परमानन्दजीके घरपर

एक साथ ही रहा करते थे। दूसरा कारण यह भी रहा होगा कि उन दिनों पटवारियोंके कोई समादर न होने एवं तत्कालीन अधिकारियोंके क्रूर होनेके कारण भी वे त्याग-पत्र देनेपर विवश हो गए हों।

परमानन्दजीकी चार सन्तानें थीं–दो लड़कियाँ और दो लड़के। एक लड़की का व्याह उन्होंने मट्टनके निकटवर्ती गाँवमें ही किया था। इसी लड़कीके मानु॒ पण्डित नामका एक पुत्र हुआ था, जिसे वादमें परमानन्दजीने गोद लिया। दूसरी लड़कीके पतिका नाम पण्डित गोपाल राजदान था। यह अपने श्वसुरके घरमें ही रहने लगा था। दो लड़कोंमेंसे, महानन्द पण्डित, नामक छोटेका तो बचपनमें ही स्वर्गवास हो चुका था, बड़ा विवाहोपरान्त वृद्ध पिताको असहाय छोड़कर चल बसा। दोनों भाई भी काल-कवलित हो गए। इस प्रकार परमानन्दजी वुढ़ापेमें वेसहारे-से हो गए। इस दशाका करुण चित्रण उन्होंने यों किया है :--

कुन तु॒ कीवल तु॒ सा'र सूरमु॒च आश।
न्ये॒ पु॒तु॒र तु॒ न्यतरन नु॒ रूद मु॒त गाश॥

[मैं अकेला रह गया हूँ, मुझे कोई आशा नजर नहीं आती। पुत्रहीन हूँ, आँखोंसे भी अव दिखाई नहीं देता है।]

उक्त पंक्तियाँ कितनी करुणापूर्ण हैं! इन्हें पढ़कर अनायास ही आँखोंसे अश्रु फूट पड़ते हैं। अकेलेपन और पुत्रहीन होनेका हमारे कविको कितना दुःख है! (हाय री नियति! तू हृदयहीना निष्ठुरा है।) परमानन्द भी एक मानव हैं, साधारण नहीं, एक कवि-हृदय! अतः उन्हें पुत्रके वियोग एवं अपनी निस्सहायताका कितना शोक हुआ होगा, इसका वर्णन शब्दों द्वारा नहीं किया जा सकता। वास्तवमें उपरोक्त पंक्तियों द्वारा भी कवि अपने शोकको अभिव्यक्ति नहीं दे सका, क्योंकि कवि होनेके साथ ही वे महान् भक्त, योगी और दार्शनिक थे। अपनी इस मानव सुलभ कमजोरी (कमजोरी नहीं, प्रकृति) को व्यक्त करनेपर स्वयं ही वे अपने आपको समझाते हुए कहते हैं कि— संसार नश्वर है, यहाँ कोई किसीका नहीं। किसीसे कोई नाता नहीं, सम्वन्ध नहीं। यदि है भी तो सम्वन्धी सदा सुख नहीं देते :—

परमानन्दु॒ छुय च्ये॒ सन्तानु॒ अरमानु॒
सनतान ओसुय स्वनु॒ तानो
हा च़े सन्तान मा आसिहिय सारानु॒।
सनतानु॒ सु॒न्दि खोतु॒ टोठ ज़ान बगवानु॒
टाठयन छि टा'ठ्य खश करानो......।

[हे परमानन्द ! तुम निपूत होनेके कारण चिन्तित हो। तुम्हारा विचार है कि पुत्र अमूल्य सम्पत्ति है। तुम यह क्यों नहीं सोचते कि पुत्र मार भी सकता है— पुत्र यदि कुपुत्र निकले तो नाम चलानेकी वजाय, डुबानेकी अधिक सम्भावना है। पुत्रसे अधिक भगवानको प्रिय जानो—पुत्र-पुत्र न करो, भगवानका नाम लो। क्योंकि प्रिय व्यक्ति, प्रिय व्यक्तियोंको मार भी सकते हैं।]

परमानन्दजीके भाइयों एवं पुत्रोंके अभावकी पूर्ति वहुत हद तक उनके सुयोग्य शिष्यों, प्रेमियों, एवं प्रशंसकोंने की थी। उनके प्रधान शिष्य पण्डित लक्ष्मणजी थे। ये 'नागाम' गाँवके निवासी थे। इनका उपनाम 'बुलबुल' था। ये फारसीके अच्छे विद्वान थे। परमानन्दजीके सम्पर्कमें आनेसे पहले ये कश्मीरीमें 'नल-दमयन्ती' नामक एक प्रवन्ध-काव्य तथा वहुत-सी गजलें लिख चुके थे। जब परमानन्दजी 'राधा-स्वयंवर' नामक प्रवन्ध लिख रहे थे, तो लक्ष्मणजीने इस काव्यका मोहिनी आख्यान लिखा। एक दिन शिष्यने अपने गुरुसे इस आख्यानको पढ़ सुनानेकी आज्ञा चाही। सुननेके अनन्तर न्यूनतम परिवर्तनोंके वाद, परमानन्दजीने उस आख्यानको अपने काव्यमें समाविष्ट कर दिया। इस रचनाको सुनकर वे वहुत प्रसन्न हुए और उन्होंने लक्ष्मणजीसे कहा—"तुमने मेरे सागमें केसर डाला है।" मेरी साधारण कृतिको तुमने असाधारण बना दिया है। इन दोनोंकी शैलियोंमें इतना साम्य है कि कोई साधारण पाठक यह कह नहीं सकता कि "राधा स्वयंवर" का मोहिनी नामक आख्यान किसी दूसरे कविका लिखा हुआ है। लक्ष्मणजीकी कविता अपने गुरुकी कविताकी भाँति हीं समरस सरस है। परमानन्दजीकी कविता कहीं-कहीं वहुत गूढ़ होनेके कारण प्रेषणीयतासे वंचित है, परन्तु लक्ष्मणजीकी कविताने कहीं भी प्रसाद गुणको नहीं खोया।

पण्डित लच्छीराम, पण्डित सहज़राम, पण्डित कशिकाक तथा पण्डित नरायणजी भी परमानन्दजीके शिष्य वताए जाते हैं। पण्डित लच्छीरामजीने भी कविता द्वारा अपने गुरुके विचारोंको अभिव्यक्ति देनेका प्रयत्न किया है। पण्डित सहज़राम अपने गुरुके वनाए हुए भजनोंको तल्लीन होकर गाते थे। इनका गला वहुत ही सुरीला एवं मधुर था। भजन-मण्डलियाँ इनके विना फीकी लगती थीं। पण्डित कशिकाक एक अच्छे वैद्य होनेके साथ ही साथ भगवद्भक्त एवं योगी थे। पण्डित नरायणजी 'मुरच़गर' इन्हींके भाई थे। इन्होंने अपने हाथों अपने गुरुका चित्र खींचा था, जो आज भी परमानन्दजीके घरमें सुरक्षित है।

परमानन्दजीके मित्रों एवं प्रशंसकोंमेंसे पण्डित धर्मचन्द, स्वामी निदान काकजी महाराज तथा सालेह गनाईका नाम उल्लेखनीय है। पण्डित धर्मचन्द, परमानन्दजीके सहधर्मी पटवारी थे। ये इनके अच्छे मित्र थे। ये भी मट्टनमें ही नौकरी करते थे। स्वामी निदान काकजी महाराज परमोच्च सन्त थे और

विजविहारामें निवास करते थे। इन्होंने सुना था कि परमानन्दजी अच्छे भजन गाते हैं। इनके निमन्त्रणपर परमानन्दजी, काकजी महाराजके पास आए और रात भर उन्हें तथा अन्य व्यक्तियोंको भजन सुनाते रहे। बहुत रात बीत जानेपर, काकजी महाराजके अतिरिक्त अन्य सभी लोगोंके सो जानेपर भी परमानन्दजी तल्लीन होकर भजन गाते रहे। इसी बीच काकजी महाराजकी आँखें भी थोड़ी देरके लिए झपकीं। उन्होंने देखा कि परमानन्दजीके एक कन्धेपर भगवान् कृष्ण और दूसरेपर राधाजी विराज रही हैं। काकजी महाराज झट उठे और उन्होंने परमानन्दजीके चरणोंमें प्रणाम किया। तबसे दोनों एक दूसरेका काफी मान एवं सत्कार करने लगे थे। कहा जाता है कि इस घटनाके पश्चात् काकजी ही विजविहारासे मट्टन तक पैदल चलकर परमानन्दजीके दर्शनोंके लिए जाते थे और साथमें चावलके आटेकी एक रोटी भेंटके लिए ले जाते थे। परमानन्दजी इस रोटीको नैवेद्य मानकर इसके अनेक टुकड़े करते और अपने शिष्योंमें बाँटते।

सालेह गनाई गाँवका 'मुकदम' था। वह अपने आपको परमानन्दजीका सेवक मानता था। परमानन्दजीकी आध्यात्मिक शक्तिने सालेहको अपनी ओर आकृष्ट किया था। वह उनके लिए सर्वोच्च किस्मका चावल तथा अन्य आवश्यक सामग्री लाता था।

परमानन्दजीने अपने समयके महात्माओं, फकीरों तथा कवियोंसे भी भेंट की थी। कहा जाता है कि वे वेरीनागके 'डूरू' नामक गाँवमें कश्मीरीके प्रसिद्ध कवि महमूद गामीसे मिलने गए थे। इसी प्रकार वे 'ख्र्ुव' नामक गाँवके निकट रहनेवाले उस समयके अच्छे मुसलमान फकीरसे भी मिलने गए थे। इस फकीरका नाम वहाब साहेव था। इनके पास परमानन्दजी अपने मित्र धर्मचन्द्रको साथ लेकर गए थे। उन्हीं दिनों परमानन्दजीने एक कविता लिखी थी। यह कविता उन दिनों बहुत लोकप्रिय हो चुकी थी, परन्तु इसमें (कविकी दूसरी कविताओंकी भाँति ही) संस्कृतके वहुतसे शव्द थे। कविता इस प्रकार आरम्भ होती है :—

कर्मु॑ भूमिकायि दिज़ि दर्मुक बल।
सन्तोषि ब्यालि भवि आनन्दु॑ फल॥

[कर्मकी भूमि (खेत) को धर्मका बल (खाद) दो, उसमें सन्तोषके वीज वोनेसे आनन्दके फल उत्पन्न होंगे।]

इस कवितामें कृषि शव्दावली द्वारा आध्यात्मिक भावोंको समझाया गया है। अन्य वातचीतके अनन्तर वहाब साहेवने विनोदमें ही परमानन्दजीसे उक्त कविताके वारेमें शिकायत की कि यह अच्छी कविता आपने 'हिन्दू-कश्मीरी' में लिखी है, अतः मुसलमान इससे कोई लाभ नहीं उठा सकते हैं। यह सुनकर परमानन्दजीने

उसी समय एक कविता वनाई। परमानन्दजी कहते जाते थे और धर्मचन्द्रजी लिखते जाते थे। इस कवितामें संस्कृतका एक भी शव्द नहीं, परन्तु उपरोक्त कविताकी तरह ही कृषि शव्दावलि विद्यमान है। इस कविताकी प्रारम्भिक ो पंक्तियोंका अवलोकन कीजिए :—

पंच-त्रे बागु॑लिस क़रारदादस।
वादस ज्यादु नज़ि कम ॥

[फसलोंको विभाजित करनेका जो पाँच और तीन विभागोंका समझौता है, उसको विलकुल पूरा करना है। इस (किए गए) वादेसे अधिक या कम नहीं।]

इससे पता चलता है कि परमानन्दजीका भाषापर कितना अधिकार था। वे आशुकवि थे।

परमानन्दजीके काव्यकी जो हस्तलिखित प्रतियाँ प्राप्त हुई हैं, उनमेंसे पण्डित नारायण कौलकी प्रतिको अधिक प्रामाणिक समझा जाता है। महाकविके प्रिय शिष्य लक्ष्मणजी भट्टने भी अपने गुरुकी रचनाओंकी एक प्रतिलिपि स्वयं वनाई है। कहा जाता है कि यह प्रतिलिपि स्वर्गीय भट्टजीके घरवालोंके पास मौजूद है, परन्तु प्रोफेसर एस. के. तोशखानीके शव्दोंमें—"इस (प्रतिलिपि) का प्राप्त होना कठिन मालूम होता है।"

महाकविकी कविताओंके कई संग्रह प्रकाशित भी किए गए हैं। इनमेंसे एक संग्रह "ज्ञानप्रकाश" के नामसे फारसी लिपिमें "वी. ए. रैणा एण्ड ब्रदर्स" की ओरसे प्रकाशित हुआ है। मास्टर ज़िन्दा कौलजीने भी नागरी लिपिमें अँग्रेजी अनुवाद सहित "परमानन्द" नामक पुस्तक प्रकाशित की है। इन्होंने इस पुस्तकको तीन भागोंमें छापा है। कश्मीरकी कल्चरल अकादमीकी ओरसे भी "परमानन्द" नामसे ही महाकविकी कई कविताएँ फारसी लिपिमें उर्दू अनुवाद सहित प्रकाशित हुई हैं। परमानन्दजीकी जिन कविताओंको छापा गया है, उनमें पाठान्तर तथा छापेकी वहुत अशुद्धियाँ हैं। जिन पाण्डुलिपियोंसे इन संग्रहकी सामग्री ली गई है, वे चूँकि फारसी लिपिमें लिखी गई हैं, अतः अशुद्धियोंका होना स्वाभाविक ही है। महाकविके जीवन एवं साहित्य-विषयक तथ्योंका संग्रह करते हुए मुझे महाकविकी कई कविताओंकी एक वहुत पुरानी पाण्डुलिपि मिली। इसके लिए मैं श्री औतार कृष्ण "रहवर" का हृदयसे कृतज्ञ हूँ। फारसी लिपि एक तो अवैज्ञानिक एवं वहु-दोषयुक्त है ही, दूसरे इसमें लिखे हुए संस्कृत और कश्मीरीके शव्दोंका शुद्ध उच्चारण हो ही नहीं सकता, तीसरे पाण्डुलिपिकारोंने किसी ध्वनि-चिह्नका प्रयोग किया ही नहीं है—इसी कारण वहुत-सी अशुद्धियाँ रह गई हैं। जहाँपर महाकविकी कविताएँ छापनेवालोंको पाण्डुलिपियोंसे किसी शव्द-विशेषका मुख्य भावके साथ सम्वन्ध

स्थापित नहीं कर सके है, वहाँ उन्होंने अनुमानसे काम लिया है और अपने ही शब्द उन स्थानोंपर ठूँसे हैं। ऐसा करना महाकविके साथ सरासर अन्याय है। साहित्यिक क्षेत्रमें ऐसा करना घोर पापसे कम नहीं। साहित्य-रसिकों एवं परमानन्दजीके भक्तोंको चाहिए कि वे उनके प्रिय शिष्य लक्ष्मणजी नागामके द्वारा तैयार की गई पाण्डुलपिकी खोज करें और उसीके आधारपर महाकविकी रचनाओंका एक प्रामाणिक संकलन, योग्य विद्वानोंकी देखरेखमें तैयार करें। मेरी रायमें लक्ष्मणजी द्वारा बनाई गई पाण्डुलिपि ही प्रामाणिक हो सकती है।

(परमानन्दजीके कवित्व एवं उनकी लेखनीमें अलौकिक शक्ति थी। उनका काव्य, रसका उमड़ता हुआ सागर है, माधुर्यका परम पारावार है। इनकी भाषा एवं भावोंमें जादू है। इनकी कविताओंका पाठ करते समय मनको अलौकिक शान्ति एवं एकाग्रताका अनुभव होता है। "लीला" काव्यको अपनानेसे पहले परमानन्दजी "ग़रीब" उपनामसे फारसी तथा कश्मीरीमें गजल आदि लिखा करते थे। उस समय जो फारसी तथा कश्मीरी कविताएँ उन्होंने लिखीं, वे आजकल प्राप्त नहीं हैं। केवल उनकी कविताओंके कुछ चरण ही मौखिक परम्परा द्वारा हम तक पहुँच पाए हैं।)

जैसा कि पहले लिखा जा चुका है कि परमानन्दजीने मुक्तक और प्रबन्ध—दोनों प्रकारकी काव्य-विधाओंको अपनाया है। पहले हम इनके मुक्तक काव्यका ही अवलोकन करेंगे। इन्होंने जो कविताएँ देवी, गणेश, शिव तथा विष्णु आदिको सम्बोधित कर लिखीं हैं, उनमें इन्होंने अपनी दीनता प्रकट की है। मास्टर जिन्दा कौलजीके शब्दोंमें इसे "दीनक्रन्दन" कहना चाहिए। गणेशजीको सम्बोधित कर कवि क्या कहते हैं। सुनिए :—

संसारुॅ गा'मुल्य य'च छिम दिको;
बुजिरस कुंह छुम न मुहिमुक यार।
सूरुम आयिचार मनटचव तुॅ त्रको।
व्यनायको! जय जयकार ॥

[इस संसारमें मैंने बहुत-से दुःख उठाए हैं; बुढ़ापेका मेरा कोई सहारा (एवं सहायक) नहीं। मेरी आयुका अधिक भाग चुक गया है। हे विनायक! आपकी जय-जयकार हो।]

कई ऐसी कविताएँ हैं जिनमें कविने योग-विद्यासे सम्बन्ध रखनेवाली बातों—प्राण, षट्दल, दश-दल, नाभिस्थान आदि शब्दोंका अधिक प्रयोग किया है। इस प्रकारकी कविताओंमें "सन्तोषि व्यालि ववि आनन्द फल" (लीलायि ज़मीन्दारी) तथा अमरनाथ यात्रासे सम्बन्धित कविताओंका नामोल्लेख किया जा सकता है। पहली कवितामें खेती करनेका विवरण देकर मानवके कर्मक्षेत्रका परिचय कराया

गया है। दूसरी कवितामें कविने कलात्मक ढंगसे अमरनाथ यात्राके सभी स्थानोंका वर्णन करके योगाभ्यासकी सभी मंजिलोंका वर्णन किया है। दोनों कविताओंसे एक-एक उदाहरण देखिए :—

द्वयि प्रानु॑ दान्दु॑जूर्य द्यन तुराष्य वाय
कुम्भकुँ कुरुँ जोरुँ तिम नुय लाय
हिलु॑ कर युथ नु॑ वीठ रोज़ि काँह छल.....

[रात और दिन दो प्राणोंके वैलोंकी जोड़ीसे (इस खेतमें) हल चलाओ। इन्हें (वैलोंको, चलानेके लिए) कुम्भक का चावुक ज़ोरसे लगाओ। देखो, कहीं इस खेतका कोई भी अंश बिना जुता न रहे।]

नाभिदीशि दशदलु॑ संगमस
यम्य चा'व्य लूख सथसंगु॑मस
कृष्णस स्थावर ज़ंगमस।

[जहाँ नाभिदेश और दशदल कमल का संगम है, उस 'संगम' नामक स्थानने लोगों एवं स्थावर जंगम कृष्णको भी सत्संगकी सुरा पिलाई।]

ऐसी कविताएँ भी हैं जिनका विषय विवेक, वैराग्य और भक्ति है। इन कविताओंके अधिकांश चरण, मर्मको छूनेवाले वन पड़े हैं। इनको पढ़ते हुए पाठक परमानन्दजीकी प्रतिभाकी दाद दिए बिना नहीं रहता। कविकी वेदान्त दर्शन सम्वन्धी कविताओंको साधारण पाठक नहीं पढ़ते हैं—वे रहस्यमयी, गूढ़ एवं उच्च वेदान्तिक सिद्धान्तोंका प्रतिपादन करती हैं। ये कृतियाँ कविके परिपक्व मस्तिष्क की रचनाएँ हैं। इन कविताओंके अध्ययनसे ऐसा लगता है कि कवि अव दान, होम, तीर्थ-यात्रा, योगाभ्यास आदिसे वहुत ऊँचे उठ गए हैं। इन दार्शनिक कविताओंमेंसे 'स़हजु॑ व्यच़ार', 'तत्त्वं असे', 'अनपीख्तुत' आदि कविताएँ उल्लेखनीय हैं। दो उदाहरण काफी होंगे :—

यिय छुख तु॑ तिय छुख छुख नु॑ व्ययन वुछोनुये।
अ'छन-हुन्द, गाश पानु॑ अ'छिव वुछू नये।
वुछुन छु छु'नुय वुछिवुन गछ़ि वुछोनुये॥

[तुम वही हो जो तुम हो—तुम्हारी परिभाषा नहीं हो सकती—तुम्हें अन्य देख नहीं सकते—पर तुम अपने आपको देख सकते हो। आँखें जिसके द्वारा

देखती हैं, उसे वे स्वयं देख नहीं पातीं। जो वस्तुएँ देखनेमें आएँ, उन्हें देखना कोई वड़ी बात नहीं, वड़ाई इसमें है कि देखनेवालेको देखा जाए।]

परमात्मा उत्तम तत् त्वम् असि।
उ॔लसे न तु॔ अदु॔ लसे न कुंह ॥

[जव तक 'तत् त्वं असि' को पूर्णरूपेण जीवनमें न उतारा जाए तव तक कोई जीवित नहीं रहेगा।]

(महाकविने तीन प्रवन्ध भी लिखे हैं, जो क्रमशः इस प्रकार हैं :—

१. राधा स्वयंवर।
२. सु॔दामु॔ च्र्यथ।
३. शवु ल'गु॔न।

इन प्रवन्धोंमें क्रमशः राधाजी तथा अन्य गोपियोंका प्रेम भगवान कृष्णके प्रति, सुदामाजीका प्रेम भगवान कृष्णके प्रति तथा शिव और उमाका पुर्नमिलन दिखाया है। इन काव्योंका उद्देश्य आत्माका परमात्मासे मिलन तथा परमात्मासे आत्माका एवं आत्मासे परमात्माका असीम प्रेम दिखाना है। 'राधा स्वयंवर' के आरम्भमें ही कविने (मानो) अपने रूपकका स्पष्टीकरण करते हुए लिखा है :—

गूक्वल हृदय म्योन तत्य चोन गूर्य वानु॔)

[मेरा हृदय गोकुल है, वहीं आपकी गोशाला है।]

और—

व्र'च म्यात्रि गूपियि चेय पतु॔लारानु॔
बनसरी नादु॔ वादु॔ मतानो......

[मेरी वृत्तियाँ गोपियाँ हैं जो तुम्हारे पीछे दौड़ती हैं और बाँसुरीका नाद सुनकर मतवाली हो जाती हैं।]

(इस प्रवन्धमें भगवान कृष्णके विवाहका प्रसंग वहुत ही मार्मिक वन पड़ा है जो पढ़ते ही वन पड़ता है। इस प्रसंगको पढ़ते हुए यह अनुभव होता है कि यह किसी सांसारिक साधारण मनुष्यकी शादी नहीं होने जा रही, अपितु स्वयं जगन्निर्माताकी

शादी हो रही है। इसी कारण तो इसमें पाँचों तत्व भाग ले रहे हैं। भगवानकी बारात जानेवाली है। देखिए, कैसी-कैसी तैयारियाँ हो रही हैं :—

वावु॑ लूकुँपाल द्राव लछ़ डुवु॑ नावानु॑
य'न्द्राजु॑ वतु॑ लिवु॑ नावानो
वसन्त रंगु॑ रंगु॑ पोश वथुरावानु॑ ॥

सिर्यु॑ चन्द्रसु॑ ह्यथ श'मा चरागा़नु॑
वुजु॑ मल अथि ह्यथ तापदानो,
वुजि़यिनु॑ माया मंज़लिस अ'लु॑रानु॑ ॥

प'त्रखी आकाशु॑ पखु॑ आ'स्य करानु॑
नख वा'त्य लोत यति बृषिबानो
ब्रोठु॑ द्राख तोरुक्य लूख सा'र्य तोतानु॑ ॥.... आदि

[स्वयं वायु देवता रास्ते साफ करने लगे। इन्द्र पथोंको लीपते गए और वसन्त पुष्प बिखेरते गए।

सूर्य और चन्द्र देवताने दीप मालिकासे पथको प्रकाशित किया, बिजली (बादलोंका) छाता लिए हुए थी और माया स्वयं (कृष्णजीका) पलना हिला रही थी कि कहीं वे जाग न जाएँ।

आकाशपर पक्षी पंखे झल रहे थे। बरात वृषभानुके यहाँ पहुँची। वहाँ सभी उन (बरातियों) की स्तुति करते हुए स्वागतके लिए निकले।])

'सु॑दाम चर्यथ' में आत्मा (जीव) और परमात्माका सम्बन्ध स्वाभाविक रूपसे व्यंजित हुआ है। आत्मा परमात्माका अंश है, परन्तु यही आत्मा जब परमात्मासे दूर होती है तो कष्टों एवं दुःखोंका शिकार बन जाती है। आत्मा तथा परमात्माके पुनर्मिलनपर असीम आनन्दकी सृष्टि होती है। सुदामाजीका परिचय कविने यूँ करवाया है :—

सोदाम जीव ओस यार भगवानस

[सुदामा (जीव) भगवानका मित्र था।]

जीवात्मा और परमात्माके सम्बन्धकी कैसी सुन्दर और स्वाभाविक अभिव्यक्ति है! इस स्वाभाविक अभिव्यक्तिसे सारे काव्यमें, कहींपर भी व्याघात नहीं आने पाया है। सुदामजीके द्वारिका पहुँचनेपर :—

ओरुँ द्राव बगवान सो दरुँशनय ।
योरु सोदाम जीव गोस अरुँपनय ।।

[उधरसे मनोहर छविवाले भगवान आए और इधरसे सुदामा (जीव) ने अपने आपको उनको अर्पित किया।]

भगवान स्वयं सुदामा (जीव) को लेनेके लिए चल पड़े। क्योंकि :—

युस कांह तस कुन अख पूर फेरे
बगवान तस तोरुँ द'ह पूर्य नेरे.......।

[जो कोई उन (परमात्मा) की ओर एक पग वढ़ा है, भगवान उस (जीवात्मा) की ओर दस कदम आते हैं।])

"शिव लगन" में भी शिव और पार्वतीके वियोग एवं मिलनका वृत्तान्त कहकर कविने आत्मा परमात्माके एकात्म भावका ही रूपक वाँधा है। महाकवि काफी विनोदी थे, इस बातका संकेत अन्यत्र हो चुका है। "शिव लगन" में भी कविके विनोदी स्वभावकी झलक मिलती है। जब श्वेत दाढ़ीवाले और जटाधारी शंकर दूल्हा वनकर आते हैं तो उनका मज़ाक इस प्रकार उड़ाया जाता है :—

प्रारून पज़िही क्यूंच़ काल
वुनि छी फटनय गोन्छुँ वाल
बुजिरस युथ सांग छी कवुँ?

[अभी (विवाह करनेकी) कौन-सी जल्दी थी, कुछ समय और प्रतीक्षा करते, क्योंकि अभी मूँछे भी नहीं आई हैं। वृद्धावस्थामें यह स्वाँग रचानेकी क्या सूझी है?])

महाकविके भाव गम्भीर एवं मनोहर हैं। साथ ही भाषा पर उनका पूरा अधिकार है। भाषा स्वयं उनके भावोंके पीछे-पीछे चलती है—उनके इशारोंपर नाचती है। उनकी भाषा संस्कृतमयी है; परन्तु जो शब्द उन्होंने संस्कृतसे लिए हैं उनकी काट-छाँट इस प्रकार की गई है कि वे कश्मीरीमें 'फिट' बैठे हैं। वे कश्मीरीके अपने शब्द-से लगते हैं। यमक, श्लेष एवं आन्तरिक-तुक आदिने उनके भावों एवं भाषामें अतीव सौन्दर्यकी सृष्टि की है। यमककी छटा देखिए। इस अलंकारने कविकी कविता-कामिनीका कैसा मनोरम श्रृंगार किया है :—

१. पोशतस दीवु ँकियि लूख आ'स्य यीवानु ँ।
पोश तस पूजि़ आ'स्य लागानो ।
पोशतस जि़ कृष्ण उदकारकुँ सन्तानु ँ।।

२. फेरन तिमन तिय जि़ फेरॅनि नीयानु ँ।
फेरन तवय आसु ँ हैरानो।।........

३. ......पर्वानु ँ मेलियस पर्वानु ँ पर्वा नु ँ।

यमक और श्लेषके एक मिले-जुले उदाहरणका भी अवलोकन कीजिए :—

त्राहि माम त्राहे पाहे मु ँरा 'री
कट संकट ही मुकट धारी

'कट' शब्द 'काटो' और 'भेड़' के अर्थमें आया है।

महाकविकी कवितामें तुककी अपूर्व योजना है। कभी पंक्तियोंके आरम्भिक शब्दोंकी तुक मिलती है और कभी आन्तरिक तुककी मोहिनी कवितामें चार चाँद लगा देती है। देखिए :—

१. कनव तसु ँजि़य कथु ँ बोज़ान।
मनव तसु ँदुय ध्यान सु ँरान।
तनव द्वन पादन मलान।।

२. खाम दु ँसि क्याजि़ याम ताम प्ययि थसे।
वाम क्युथ खसि तथ बसे नु ँ कांह।
थुसि थुसि सारनस मो लग थु ँसे।
असे उॅलसे न तु ँ लसे न कांह।।

जिस दिन परमानन्दजीको महासमाधि लेनी थी, उस दिन वे प्रतिदिनकी भाँति सिद्धासन लगाकर बैठे। उन्हें बुखार भी हुआ था, पर उन्होंने उस ओर कुछ ध्यान न दिया था। केवल अपने शिष्योंको अपनेसे दूर न होने दिया। सिद्धासनस्थ होकर ही "ॐ" का उच्चारण करते-करते महाकवि समाधिस्थ हुए। उनके

शिष्योंने देखा कि कोई वस्तु उनके ब्रह्माण्डको भेदकर आकाशमें विलीन हो गई। यह घटना सन् १८७९ ई. की है। इस प्रकार लगभग वानवे वर्ष तक जीकर परमानन्दजी गोलोकवासी हुए। इनके निधन-सम्वत्का उल्लेख इनके प्रिय शिष्य लक्ष्मणजी 'वुलवुल' ने फारसीमें इस प्रकार किया है :—

बुलबुल कशीद नालुं ब दिल गुफ्त हांज़ि दम।
वाहोय हाय साज़ कि गुल्शन खेज़ां गिरिफ्त॥

[जिस समय 'वुलवुल' उद्यानमें पतझड़के आनेके कारण चीखी, उस समय मेरा दिल दुखमें डूव गया।]

परमानन्द

[काव्य-सञ्चय]

१. व्यनायको !

नायकुँ श'वुँ राज़ुँनि दायको
व्यनायको ! जयजयकार ॥१॥

असतुँथ चा'न्य मा व'निथ ह्यको
पाखंडुँ रोसतुय बोज़ म्या'न्य ज़ार ।
पाद चा'न्य शेरि ह्यथ हेरि बोनुँथ्यको ॥२॥

स्वन तुँ रु'फ पाथ्यम नुँ रत्नादिको,
कथन म्याञ्न चुँय कन दार
ओशु म्योन मुक्तुँ चुय पादन छको ॥३॥

बोड बार प्योसुत, मा छिम नखो,
ग'च चाञ्नि ह्यकहा लोचरिथ बार ।
नतुँ कति सोरि बाल फ्यकव फ्यको ॥४॥

असवुँनि मोखुँ खसुँवुँनि अरको !
व्यज़ वशात यिज़ि गछुँ बेदार
पम्पोश लागुँहय पूज़ि ज़म्बको ॥५॥

माजि हुँन्दि टाठि तुँ राजि ज़नको
गनीशुँ नावस चोर आदिकार
म्ये निशि चुँ तुँ सा'र्य सनकाद्यको ॥६॥

यूगस चुँय छख मूल कोस्बको
शय चाञ्न आमुवञ्न मूलादर
भूगस छुय अमृत उँदको ॥७॥

१. विनायक !

देवताओंके नायक, महाराज शिवजीके मन्त्री, विनायक ! आपकी जय जयकार हो ! ।।१।।

मैं आपकी स्तुति करनेमें अपनेको असमर्थ पाता हूँ । अतः मेरी पाखण्ड रहित विनय सुन लीजिए। आपके श्रीचरण अपने सिरपर धारण कर मैं बहुत इतराऊँगा ।।२।।

आप मेरी बातें कान लगाकर सुनें--मेरे पास सोना, चाँदी या रत्न आदि नहीं हैं; मैं अपने आँसुओंके मोती ही आपके श्री चरणोंपर न्योछावर करूँगा ।।३।।

मेरे निबल कन्धोंपर भारी बोझ है। आपके अनुग्रहसे ही यह बोझ हलका हो सकता है, नहीं तो वह पर्वत (-सा बोझ) चुटकियोंसे समाप्त नहीं होगा ।।४।।

हे मुस्कुराते चढ़ते सूर्य ! आप विधिसे आएँ। मैं जागृत होऊँ और आपकी अर्चना कमलों तथा केवड़ेके पुष्पोंसे करूँ ।।५।।

माँकी आँखोंके तारे ! राजर्षि ! आपका गणेश नाम--महत्वपूर्ण है (आप आदि देव हैं।) मेरे लिए आप ही (सभी) सनकादि ऋषि हैं ।।६।।

योगके आप ही मूल अर्थात कुम्भक हैं। आपका स्थान प्रथम ही है। आपके भोगके लिए अमृतोदक है ।।७।।

संसारॅं गा'मुॅत्य य'च छिम द्यको;
बुजरस कुँह छुम न मुहिमुक यार।
सूरुम आयिचार मनटचव तुॅ त्रको ॥८॥

वासना तीरन हुन्द बॅु ;पाहको,
हॊल बोज़ुन गोम पहॊल यार
म्ये तॅु मा कां'सि वुछि, तियछुमशको ॥९॥

परमानन्द छुस बॅु चोन याचको
सुवॅन्दॅु करॅवॅुन नमस्कार
मानसॅु वाचकुॅ ब्ययि कायको ॥१०॥

संसारमें मैंने अनेक कष्ट उठाए हैं। बुढ़ापेका कोई भी सहारा नहीं। मेरी आयुका अधिक-सा भाग बीत गया है ।।८।।

मैं वासना-रूपी भेड़ोंका मालिक हूँ और 'अन्यथा सुनना' मेरा चरवाहा मित्र है। मुझे शक है कि क्या कोई व्यक्ति मेरी जैसी (बुरी) स्थितिमें है? ।।९।।

मैं परमानन्द आपका याचक हूँ और आपको मन, वाणी और कायासे नमस्कार करता हूँ! ।।१०।।

---

२. कटॅु संकटॅु

त्राहि माम त्राहे पाहे सु'रा'री
कटॅु संकटॅु ही ! मो'कटॅुदा'री ।।१।।

ज्यनॅु ज्यनॅु यिनु'यिनॅु य'चगा'सुच गटॅु
गटॅु बीच कीता गटॅु आकार
न तॅु आकाश बॅु तॅु क्या वदॅु क्या गटु ।।२।।

होल होल पापुन बोर गोबतॅु डचजि अटॅु
अटॅुबारि ह्यथ काठ क'ह्य वातॅु गाठ
वथ दूर यन्द्रिय च.र बडि सटॅु वटॅु ।।३।।

दीह पुछ्य कालुन त्रास छुम तॅु य'च नटॅु
नटॅु ध्य'ज प्रा'विथ बुहुत स्वांग
पट कोड म्य कालन तॅु वुञ्जि शेरुॅनस बॅु पटॅु ।।४।।

तवॅुनॅुनि बाजारुॅ मुखॅुतस म्ये लोग वटॅु
यावनुन पुख्तॅुकार सोदा खाम ।
यावुन यास सोरि बुजिरस कति वटॅु ।।५।।

मिठॅु मिठॅु छा'र्य छा'र्य खटॅुनस आस खटॅु
खटॅु चा'र्य चा'र्य मिठॅु ल'बिजितॅु क्याह
लय मा रटॅु पाद चा'नी नय रटॅु ।।६।।

यी वोव म्ये फलि फलि ती ह्यलि ह्यलि वटॅु
कलि कवॅु रोवुस गलि ग'यमॅु ज्यव
च्वचि किछॅु विहनय ग्रटॅु ब्यूठसुत च.ग्रटॅु ।।७।।

३. संकट काटो

हे मुरारि ! मेरी रक्षा कीजिए। हे (मोर) मुकट धारण करने-वाले ! मेरे इस भेड़ उठानेके संकटको काटिए* ।।१।।

मैं आवागमनके बन्धनमें पड़ा हूँ––इस बातका अनुभव मुझे यह शरीर करा रहा है। यद्यपि मैं आकाशकी तरह घटने-बढ़नेसे परे हूँ ।।२।।

मेरा पथ टेढ़ा-मेढ़ा है और पापोंका बोझ मेरे सिरपर है। इस बोझ की रस्सियाँ ढीली-ढाली हैं और बोझ भारी है। अपने कन्धोंपर इस बोझको लिए-लिए मैं घाटपर कैसे पहुँचूँगा ? क्योंकि मेरे अंग-अंग अकड़े हुए हैं, मेरी मंज़िल दूर है और इन्द्रियाँ रूपी लुटेरे मुझे लूटनेके लिए तैयार बैठे हैं।।३।।

देहके कारण मुझे मृत्युका भय है और इस (भय) से थरथराता हूँ। अभिनेताओंकी तरह मैंने बहुतसे स्वाँग रचे हैं। महाकालने मेरे नाम समन जारी किया है और मैं अभी भी (तनपर) वस्त्र सजा रहा हूँ ।।४।।

इस संसारके बाज़ारमें मेरे 'मोती' किसी कामके भी नहीं समझे गए। यौवनका काम यद्यपि पुख्ता (दृढ़) होता है, पर (इसमें किया गया) 'सौदा' कच्चा ही होता है। (पर,) जब मेरा यौवन बीतेगा तो वृद्धावस्थामें मैं क्या अर्जन करूँगा ।।५।।

मीठी-मीठी वस्तुएँ चुन-चुनकर मैंने खाईं और खट्टी छिपाके रखीं। अब खट्टी (वस्तुओं) मेंसे मीठी (वस्तुएँ) कहाँ मिल सकतीं है ? यदि मैं आप (भगवान) के चरणोंकी शरण न जाऊँ तो मेरा मूल्य ही क्या है? ।।६।।

जैसा मैंने किया है, वैसा भरना है––मैंने परिश्रम करना क्यों छोड़ दिया ? मेरी ज़बान बन्द क्यों हुई ? यदि चक्की बैठीकी बैठी रहे, चलाई न जाए––तो क्या रोटियाँ ऐसे ही मिलेंगीं ? ।।७।।

---

* देखें पृष्ठ २७

मु'न्डत छु आर कोर म्य मु'न्डन तॅ थविम जटॅ
मु'न्डनॅ गोल नॅ स्योन व्यवहारॅ कुल
फाल वुछ्य वुछ्य हाल फाल लोग म्य मुलटॅ ।।८।।

शोग्य मॅत्य तॅ गरि बीठ्यमुत्य खेम फूलट
वुछ तॅ योद जांह मा म्य मद फूंचाव
अदॅ मा आसिह्यम येमि खोतॅ वुलटॅ ।।९।।

धरना तॅ बडना फुटॅरिस पलॅ वटॅ
ज़ोनुम न होदॅहरि हुरवुन आस
हफ्त जोश पानस आकाशि प्ययस त्रटॅ ।।१०।।

तार दिम यवॅ तवॅ बवसरॅ नतॅ फटॅ
रंगॅ रंगॅ मंगनस बॅ टंगु आमुत
मोंगमय यिकॅवट चॅति दिम यिकॅवटॅ ।।११।।

परमानन्द सु'र तॅ सोरॅनय सोरि लटॅ
लटॅ पटॅ ह्यथ रोज़ सखॅरिथ क्यथ
सूरुय न वुठ वुञि, सूरॅमुत छुय मटॅ
कटॅ संकटॅ ही मो'कटुदारी! ।।१२।।

———————

मैंने मुण्डन किया और पुनः जटाएँ बढ़ाईं। मुण्डनसे मेरा (सांसारिक) व्यवहाररूपी वृक्ष नहीं मिटा (अपितु काटनेके वाद उसकी शाखाएँ और अधिक बढ़ीं ही।) मेरे हलकी नोक ज़मीनमें किसी (कठोर) वस्तुसे अटक गईं ॥८॥

यद्यपि मैंने कभी घमण्ड नहीं किया था; और मैं घरमें सो रहा था (भीड़में नहीं गया); फिर भी मेरी पिटाई हुई। यदि मैंने घमण्ड किया होता तो मेरा भाग्य इससे भी उल्टा (वुरा) होता ॥९॥

मैं जिऊँ और उन्नति करूँ, इस कारण मैंने छोटे-बड़े पत्थर तोड़े—कड़ा परिश्रम किया। यह नहीं जाना कि मैं व्यर्थके परिश्रममें लगा हूँ, क्योंकि आकाशसे कढ़े गातपर वज्रपात हुए ॥१०॥

(हे प्रभु !) जैसे भी सम्भव हो, वैसे मुझे इस भवसागरके पार लगाइए, नहीं तो मैं (इसीमें) डूव जाऊँगा। वार-बार कहते (याचना करते) हुए मैं अव ऊव गया हूँ। मैंने अव (आपसे) एक ही वार माँगा, आप भी एक बार ही दें ॥११॥

अरे परमानन्द, भगवानका स्मरण करो। इससे तुम्हारा आवागमन मिट जाएगा। बोरिया-बिस्तर बाँधकर जानेके लिए तैयार रहो। तुम्हारे पास यदि और कुछ नहीं तो होंठ तो है। इन्हींसे उन (भगवान) की स्तुति करो ॥१२॥

———

३. कर्मु॑ बूमिका

कर्मु॑ बूमिकायि दिज़ि दर्सुक बल,
सन्तोशि ब्यालि बवि आनन्दु॑ फल ।। १ ।।

द्वयि प्रानु॑ दान्दु॑-जूर्य द्यन तु॑ राथ वाय
कुम्भकु॑ कुर' ज़ोरु॑ तिमनुय लाय
हिल कर युथ न कांह् बीठ रोज़ियॆल ।। २ ।।

लोलु॑ के अलु॑फालु॑ तुलु॑ना'विथ
दै॑र य टु॑फुरि दतु॑ फुटु॑रा'विथ
वै॑रुक स्नेह युथ नु॑ रोज्यस तल ।। ३ ।।

वेचारु॑ ब'ठ्य तु॑ बेरु॑ ल'दिथ क्यथ
श्रोच् यनु॑द्यव शोज़ु॑रा'विथ वथ
समु॑दृष्टिपातु॑ ज़न अदु॑ फेरि ज़ल ।। ४ ।।

सोंथ छुय दोह तारु॑ मोत यावुन
पज़ि नज़ि साथा रावु॑रावुन
वव ब्योल मव प्रार करू मंगल ।। ५ ।।

त्रोपरिथ स्फुरनायि ना'न्य वुडर
स्वरु॑के रबिचकु॑ सु॑तियन बर
यन्द्रिय गगु॑रन करु॑ व'ठल ।। ६ ।।

भक्ति हंज़ि न्यदि फेरि सादु॑नायि खीत्य
ह्यलि नेरि तपु॑के पपु॑ सगु॑ सु॑त्य
सम्बावु॑नायि फो'लि पम्पोशि डल ।। ७ ।।

३. कर्म-भूमि

कर्मोंकी भूमि (खेत) को धर्मका बल (खाद) दो, (इसमें) सन्तोषके बीज बोनेसे आनन्दका फल उत्पन्न होगा ।।१।।

रात और दिन दो प्राणोंरूपी बैलोंकी जोड़ी द्वारा (इस खेतमें) हल चलाओ। इन्हें (बैलोंको चलानेके लिए) कुम्भकका चाबुक जोरसे लगाओ। देखो (सावधानीसे हल चलाना) कहीं इस खेतका कोई छोटा-सा भाग भी विना जुता न रह जाए ।।२।।

प्रेमरूपी हलकी नोकसे (इस खेतको) जोतकर धैर्यके मुग्दरसे ढेले तोड़ दो। कहीं (इस खेतमें) बैरकी सीड़ छुपी न रहने पाए ।।३।।

विचारकी मेंड़ें बनाकर श्रुतियोंकी नालियोंका पथ साफ करो—तभी (इस खेतमें) समदृष्टिका पानी बराबर मात्रामें हर कहीं पहुँचेगा ।।४।।

वसन्त—यौवन—अल्पकालिक है, अतः इसका एक भी क्षण गँवाना नहीं चाहिए। उठो, देर काहेकी; मंगल पाठ करनेके अनन्तर बीज बो लो ।।५।।

भावतरंगें चूहोंके विले हैं। इन्हें मन्त्रोच्चारणके गीले ढेलोंसे पूर दो और (इस प्रकार) इन्द्रियरूपी चूहोंको (इस खेतीसे) विदा करो ।।६।।

साधनाकी खेती भक्तिके निरानेसे हरी-भरी होगी। तपस्या-जल द्वारा सींचनेसे इसमें बालियाँ फूटेंगी ।।७।।

वि'शये प'श्य वारुँ रंछिनावख
तिमनॅ य अंथि युथ नॅ खीत्य ख्यावख
बावॅचि रावंछि नेर न्यशकल ।। ८ ।।

ह्यलि येलि नेरि त्यलि सपन्यसक्राव
वैरागॅ द्राति सॅ.त्य लून्य लून्य त्राव
सम्बदॅ रुंस्तॅ मा'व्य लाव्यन वल ।। ६ ।।

मटि खसॅनॅचि रजि मटि मटि सार
सदॅनि अन बा'य बन्द तय यार
न्यति नेमॅ सॅम्बॅरिथ अदॅ समि खल ।।१०।।

त्रेगुनॅ त्यागु नोम अख गुन लद
न्यरमानॅ प्रावख न्यरमानॅ पद
शम त'त्य तम दिथ़ तॅ कर कोशल ।।११।।

ध्यानॅ दारुँनायि वानॅ मोन्ड व्यस्तार
ज्ञानॅ दानॅ खास खास गासॅ न्यश्चार
मनके अनुववॅ वारुँ दिथ छल ।।१२।।

त्यागॅके अथॅ सॅ.त्य वारुँ छुबॅनाव
प्रोन तॅ जग ब्योन ब्योन फुटॅजन थाव
जागि रोज लागॅन'यि त्रा'विथ ज.वल ।।१३।।

तुलिथ अदॅ थव अम्बॅरस माल
सूहम हायकुँ सॅ.त्य नखॅवाल
लुति बार वातॅना'विथ खनॅबल ।।१४।।

शमॅ, दमॅ, यमॅ, नेमॅ गाठ वातॅनाव
शान्ति श्रद्धायि जलॅ पकुँनाव नाव
पानस शिहलिथ मानसबल ।।१५।।

यदि तुम विषय-वासनाओंके पशुओंको अच्छी तरहसे पालोगे तो इस बातका ध्यान रखना कि कहीं वे तुम्हारी इस खेतीको चर न जाएँ। सावधानीसे खेतकी रखवाली करनेके लिए निकलो ।।८।।

बालियाँ फूटनेके अनन्तर वे पक जाएँगी। (पकनेके बाद) वैराग्यकी दराँतीसे (इस फसलको) काटो और घासके पत्तोंसे पूले बाँध लो ।।९।।

कर्तव्यकी रस्सीसे इन पूलोंको बाँधकर (गट्ठा बनाकर) अपने कन्धोंपर रखकर ले जाओ। सहायताके लिए अपने बन्धुओं तथा मित्रोंको ले आओ। नियमपूर्वक (फसल) इकट्ठा करनेसे ही खलिहानमें अम्बार लगेंगे ।।१०।।

तीन गुणोंके त्यागका एक टाल बना दो। इसके निर्माणसे––तीन गुणोंके परे होनेसे––निर्वाण पाओगे, वहीं विश्राम करो। उसीसे तुम्हारा कुशल होगा ।।११।।

दानोंको पृथक् करनेके लिए ध्यान और धारणाका 'पीटनेका कुन्दा' लगाओ। ज्ञान तथा दानका अच्छा-अच्छा घास बीन लो। (हाँ,) इससे मनके अनुभवकी छड़ीसे बचे हुए दानोंको अलग किया गया हो ।।१२।।

त्यागके हाथसे अच्छी प्रकार धानको घाससे अलग करके (धानके) विभिन्न किस्मोंके अलग-अलग ढेर लगाओ। सोते हुए भी तुम सावधानीसे इस (धान) की रखवाली करो ।।१३।।

इसके बाद तौलकर यह माल अम्बारोंमें इकट्ठा करो, तदनन्तर "सोऽहं" की तराजूसे तौलकर इसे (जागीरदार आदि) को दो। जब यह (धान) घाटपर पहुँचेगा तो तुम्हारा बोझ हलका होगा—तुम स्वतन्त्रताका अनुभव करोगे ।।१४।।

शम, दम, यम और नियम (कुलियों) के द्वारा (इस धानको) घाट तक पहुँचा दो और श्रद्धाके पानीपर इस नाव (जिसमें यह धान है) को खे लो। इसके पश्चात् सन्तुष्ट होकर मानसबल [(मनकी शक्ति) नामक स्थान] पर विश्राम करो ।।१५।।

लागॅुनयि वालि! माल आगस तार
खा'ल्य युथ नॅु रोज़ि हा'ल्य जा'गीरदार
फा'ज़िल तॅु बडकी न्येरि कस तल ।।१६।।

चा'रिथ ब्ययि ब्योल सञ्चे'थ थव
सोंथ ये'लि यियि त्यलि फलि फलि वव
वुपकारॅ वुपदी न'व न'व थल ।।१७।।

यूगॅु मायायि हुन्द बूगी आस
यी छय दॅुय तस सॅूत्य तिय कास
सादॅु नाव व्योय तय स्वादॅु मो डल ।।१८।।

कर्मॅु फल सोरी ग्वरॅ शबॅुदय
सञ्चे'थ क्रेयिमान प्रारबॅुदय
कर्मॅु कांडॅु वनि नेरि ज्ञानॅु वुज़'मल ।।१९।।

स्वयम् प्रकाशिकि व्यज्ञानय
त्रा'विथ मान ब्ययि अबिमानय
प्रा'विथ रोज़ द्वादशान्तॅु मण्डल ।।२०।।

परमानन्द ओस ज़मीन्दार
हूरिथ दनॅु धार सूरिथॅुलार
वांगॅुजवारिच च'जिस गांगल ।।२१।।

अरे काश्तकार ! माल स्वामी अर्थात् जागीरदार तक पहुँचा दो। कहीं वह अपने हिस्सेसे वंचित न रहे। (जब तुम ऐसा करोगे) तो क्या उसका तुम्हारे पास कुछ रहेगा ? ।।१६।।

अच्छे किस्मका बीज संचित करके रखो। जब पुनः वसन्तागमन होगा तो हर दानेको बो लो। उपकारसे उनमें नए-नए अंकुर फूटेंगे ।।१७।।

जो तुम्हें भगवानसे अलग करता है, उसे (मायाके पर्देको) हटा दो और योगमायाके भोगी बनो। अब तुम साधु हो गए, अतः तथावत् आचरण करो ।।१८।।

यदि तुम गुरुके शब्दोंके अनुसार आचरण करोगे तो तुम्हारे सभी कर्म—संचित, क्रियमाण तथा प्रारब्ध—छूमन्तर होंगे और कर्म-काण्ड (साधना) से ज्ञान-सौदामिनी तुम्हें ढूंढ़ने निकलेगी ।।१९।।

स्वयं प्रकाशके विज्ञानसे तुम मान तथा अभिमानको त्यागो और द्वादशान्त मण्डलको प्राप्त करो ।।२०।।

परमानन्द एक किसान था, जिसने सारा ऋण चुकाया और मुक्त होकर उसका उधारका दुःख दूर हुआ ।।२१।।

---

४. गूकल हृ'दय म्योन

गूकल हृ'दय म्योन तति चोन गूर्यवानँु
च़यथ व्यमर्शुँ दिफतिमानु बगँुवानो ।। १ ।।

व्रँच़ म्याञ्नि गूपियि च़े पतँु लारानँु ।
बनस'री नादँुवादँ्म तानो ।।
न'शिरिथ ह्यस तँु होश म' शिरिथ परतँु पानँु।। २ ।।

अथँुवास च़े ँय सँूतिन तँु रास गिन्दानँु ।
व्यास नारुँद ति त़'त्य आसानो ।।
दासँु बावँु रादा कृष्ण कृष्ण ज़ पानँु ।। ३ ।।

दीवी तँु दिवताह सीव च़े ँय क रानँु ।
बवसरुँ तवँु तार लबानो ।।
ग्यवान रेवान ज़्यव छख नँु लोसानँु ।। ४ ।।

असँुवँुन्य कोसम मोखँु चानि फोलानँु ।
कुस तब आसि नज़ि शहलानो ।।
क्वसतबँु त्रटच तँु मालँु आस होय पैरानु।। ५ ।।

मायायि सँूतिन च़ँु शायिशायि आसानँु ।
कायायि मंज तँु ब्योन रोज़ानो ।।
सिर्यिके आसनँु छाया छेँ बासानँु ।। ६ ।।

ओमँु शब्दँु गायत्री शक्त च़ेय ज़ पानँु ।
हूमँु-यगञ्नि ज़पँु-तपुँ जगु-सानो ।।
शमँु दमँु यमु नेमँु ध्यानँु दारनायि दानँु ।। ७ ।।

४. गोकुल उर मेरा

हे चित्त-विमर्श——दीप्तिमान भगवन्! मेरा हृदय गोकुल है। वहीं आपकी गाएँ हैं ॥१॥

मेरी वृत्तियाँ गोपियाँ हैं, जो आपकी बाँसुरीका नाद सुनकर मतवाली हो, सुध बिसारकर स्व-पर-भेद रहित आपके पीछे-पीछे दौड़ती हैं ॥२॥

आपका हाथ पकड़कर वे आपके साथ रास रचाती हैं। वहींपर व्यास तथा नारद-जैसे ऋषि भी रहते हैं, जो दासभावसे 'राधाकृष्ण राधाकृष्ण' जपते रहते हैं ॥३॥

देवियाँ और देवता आपकी सेवा करते रहते हैं, उसीसे वे भव-सागरसे पार होते हैं। वे कभी भी आपका कीर्तन और भजन करते नहीं थकते ॥४॥

आपके हँसनेसे फूल खिलते हैं। वह कौन-सा ताप है जो इसे देखनेपर दूर नहीं होता? हम चाहते हैं कि हम आपको कौस्तुभमणिकी माला एवं हारसे आभूषित करें ॥५॥

माया द्वारा आप सर्वव्यापक हैं। आप शरीर धारण करते हुए भी इससे अलग हैं——सूर्यके होनेसे ही छायाका आभास होता है ॥६॥

'ॐ' शब्दसे गायत्री शक्ति आपका ही जप करती है। होम, जप, तप, शम, दम, यम, नियम तथा ध्यान और धारणासे आपका साक्षात्कार होता है ॥७॥

आकाशँ मुखु छुख आकाश बसानँ ।
तथसथ प्रकाश न्यथ आसानो ।।
दीवनँ हुन्दि दीवँ प्रा'नियन हुन्दि प्रानँ ।। ८ ।।

युग युथ स्वरि तस त्युथ छुख हावानँ ।
मुख हाव स्यति श्री नारानो !
प्राणँ नँच फुँरसथ छम नँ रूज़ मँचदानँ ।। ९ ।।

तपँ जपँ बावँ बावँनायि चँय सादानँ ।
सादन तोरय चँ सादानो ।।
दरशनँ चानि छुख अमरचथ वरशानँ ।।१०।।

तपु र्यंश बडि अबिमानँ आय तोशानँ ।
आय सूर्य सूर्य आय क्रेशानो ।।
न्याय नय अन्दुनख वुन्दु छिय सन्दानँ ।।११।।

गारँहन कंछा तँ हावँहस पान पानँ ।
लबि रोजि पानु लबि पा'न्य पानो
सोर्यस वंदँ मुक्तँ सोरि स्वख प्रावानँ ।।१२।।

राथ दोह परमानन्द छुय कांछानँ ।
परमँ आनन्दँ यु'द छु पा'न्य पानो
व'न्य व'न्य वनँनुय व'न्य चे दीवानँ ।।१३।।

भक्तन चान्यन छु असत्वथ करानँ ।
स्वस्थित तिहुन्दि मुखँ आसानो
बुजिरस हथँ हथँ अथरोट कांछानँ ।।१४।।

['राधा-स्वयंवरँ' मंजु]

————

आप आकाश-जैसे हैं। आप अमर सद्‌प्रकाश हैं। आप देवताओंके देवता तथा प्राणियोंके प्राण हैं ।।८।।

जो जिस रूपमें आपको भजता है, आप उसी रूपमें उसे मिलते हैं। हे श्रीनारायण, आप मुझे भी दर्शन दें। मैं अब पलभरके लिए भी प्रतीक्षा नहीं कर सकता ।।९।।

(वे) तपस्या एवं जप द्वारा आपकी अर्चना करते हैं; परन्तु आप ही उन्हें ये साधन प्रदान करते हैं। आपके दर्शनोंसे उनपर अमृत-वर्षा होती है ।।१०।।

तपस्या करनेवाले ऋषि बड़े अभिमानसे हर्षित होते हुए आए; (कि हम भगवानका भेद जान लेंगे) परन्तु आयु चुकनेपर वे पुनः जीवनकी इच्छा करते हैं (क्योंकि जीवन पर्यन्त वे आपका पार न पा सके) जबतक उनके संशयोंका समाधान न हो, वे चिन्तनमें लगे रहेंगे ।।११।।

जब आप स्वयं किसीको बुलाकर (उसपर अनुग्रह करके) अपना आपा न दिखा देंगे, तब वह (उसका अहं) एक तरफ रहकर अपने आपको पाता है (उसे आत्म-साक्षात्कार होता है) और बन्धनमुक्त होकर वह निर्वाण पाता है ।।१२।।

परमानन्द आपको अहोरात्र चाहता है। यद्यपि वह स्वयं परम आनन्द है। वह बार-बार आपके भजन गाता है और आपकी खोज वनोंमें करता है ।।१३।।

वह (परमानन्द) आपके भक्तोंकी स्तुति करता है; क्योंकि उन्हींके अनुग्रहसे वह अच्छा है। वह बुढ़ापेमें हर प्रकारकी सहायता चाहता है ।।१४।।

['राधा-स्वयंवर' से]

५. रादा

गुक्वलॅ गूरा अख ओसॅ वृशबानॅ
क्वलॅ बोड़ तॅ मुलु च़ोर तॅ वाग्यवानो
ब'र्यायि आ'सिस सम्पता वखुनानॅ ।। १ ।।

ब्रांदस वावॅ लोकपाल लछ़ डूवानॅ
शांदस प्यठ सु वछ़य सावानो
दांदस श्यवॅजी वृशिबस जागानॅ ।। २ ।।

तत्य आयि रादा ज़नॅमस छि वखॅनानॅ
कश्नॅ क्रृश्नु क्रृश्नु आ'स ज़पानो
मा'लिस तॅ माजि ज़यथ पछ़ छसनॅ यीवानु ।। ३ ।।

ओसुख न ज़ामुत ब्यायि केंह सन्तानॅ
पोत्र बोछि लूख क्वछि हेवानो
तवॅ कनि दीवी तॅ सुय ज़नॅमस पानॅ ।। ४ ।।

थनॅ प्यथ रतॅनव सॅ़त्य कुरुहस श्रानॅ ।
अथॅ प्यठ अथु छिस ललवानो ।
आश्चर सु ठाछर बॅ्व'निथ कवॅ ज़ानॅ ।। ५ ।।

चन्दन मंज़ुलिस आ'सिस अ'लुरानॅ
स्वनॅ जालारॅ मुख़्तॅ वुरानो
मुख तस वुछिथ मुखॅतस ओश यीवानु ।। ६ ।।

त्युथ छुनॅ आकाशि चन्दॅरमॅ प्र'ज़्ॅलानॅ
चन्द्रलूख स्वन्दॅरन ति असानो
मोख़्तॅ फोल स्व',दायि डबॅ वां'लिजिक रानॅ ।। ७ ।।

५. राधा

गोकुलमें वृषभानु नामके एक ग्वाल थे। जो उच्च कुल के, महान एवं भाग्यवान थे। उनकी स्त्रीका नाम सम्पता था ।।१।।

वायु देवता उसकी देहलीको बुहारता था। (फिर भी) वे बछड़ोंको अपने सिरहाने सुलाते थे। (उनके वृषभ इतने सुन्दर एवं शक्तिमान थे) कि शिवजी उनकी ताकमें रहते थे ।।२।।

कहा जाता है कि इन्हींके यहाँ राधाजीका जन्म हुआ। वे कृष्ण नामका जप करती थीं। राधाके माता-पिता उसके जन्मके कारण फूले न समाये ।।३।।

उनके यहाँ कोई और सन्तान नहीं थी, इस कारण वे दूसरोंके बच्चोंसे प्यार करते थे। (अब उनकी प्रसन्नताका कहना ही क्या) कि स्वयं देवीने उनके यहाँ जन्म लिया ।।४।।

उसके जन्मते ही उन्होंने उसे रत्नोंसे नहाया। वे उसे अपनी बाहुओंपर ही झुलाने लगे। मैं उनके अतीव वात्सल्यका वर्णन कैसे करूँ!!! (असमर्थ हूँ।) ।।५।।

उन्होंने उसे चन्दनके पालनेमें रखा जिसकी सोनेकी झालरमें उन्होंने मोती पिरोये। उस (राधाजी) के मुखके सौंदर्यके आगे मोती भी (शर्मके मारे) रुआँसे हो रहे थे ।।६।

आकाशका चन्द्रमा भी वैसा (सुन्दर) एवं आभा-सम्पन्न नहीं था (जैसी राधाजी) थी। वह इन्द्रकी सुन्दरियोंपर भी हँसती थी। वह एक अमूल्य मोती (जैसी) थी और सेविकाएँ उसे रखनेके लिए अपने दिलकी डिबिया बनाती थीं ।।७।।

ज़'गि हुंज़ माता दूवद आ'स चेवानँ
स्वदँ रुँच कूर यँसँ आसानो
ललवान गूर्य तस, कूर्य तस बनानँ ।। ८ ।।

द्यन द्यन चन्दँ रमँ–ज़न आयि ब डानु
आयि द'र तँ साय छम नँ मशानो
काय तस रूँप–सुन्ज़ ल'रुँ ज़न थदानँ ।। ९ ।।

राधा छेँ गायत्री तँ सावित्री आसानँ
सरस्वती ति छिस बखनानो
प्रथ क्वलँ ची यषृदीवो स्वय पानँ ।।१०।।

भक्तँ–ज़न छिस सर्व शखती मानानँ
न्यति नेम तस्य क्या छि पूज़ानो
मा'ज्य क्वन्डँ ल्यनी तँ शुर्य छिस पां'छ प्रानँ ।।११।।

सँती सती सतँ व'रिशी वातानु
कोर्यन सूत्य व'छ़च रछानो
संगरमालन हिय ज़न फोलानँ ।।१२।।

व'छ़च तँ कामँ दीनँ आसँ गासँ ख्योन त्रावानँ
मुरली येलि आसँ बोज़ानो
व्यास नारद तँ सनियास सास मलानँ ।।१३।।

मुरली बूज्य़ बूज़्य स्वरुँ आसँ उलानँ
असान कुनि कुनि वदानो
तनँ मनँ गूर्य–क'नि अरन्य छावानु ।।१४।।

हांगल तँ हर्नँ ब्ययि सांगलँ मेलानँ
गांगल न मंज़ कुनि रोज़ानो
रादा छे क्रुशनस दूरि चूरि रोज़ानँ ।।१५।।

जगन्माता (राधिकाजी), जो समुद्रकी कन्या हैं, दूध पी रही थीं। ग्वाले उसे प्यार करते थे और प्रिय पुत्री कहते थे ॥८॥

वह दिनों दिन चन्द्रकी कलाओंकी तरह बढ़ती गई। उसके प्रति मेरी भक्ति घटती नहीं, वह दृढ़ है। उसकी काया रजत-भवन-सी शोभित होने लगी ॥९॥

राधाजी गायत्री और सावित्री हैं, इन्हें ही सरस्वती भी कहते हैं। वही (राधाजी) हर कुलकी इष्ट देवी भी हैं ॥१०॥

भक्त लोग उन्हें सर्वशक्तिमती मानते हैं और नियमपूर्वक उनकी पूजा-अर्चा करते हैं। वह माँ कुण्डनिणी हैं और पाँच प्राण उसीसे पैदा हुए हैं ॥११॥

सती (राधा) सात वर्षकी हुईं और (अन्य गोप) कन्याओंके साथ बछड़े चराने लगीं। (वह उन कन्याओंके साथ ऐसी लग रही थीं) उषा कालमें गिरि श्रृंगोंपर बेलाके पुष्प खिल रहे हों ॥१२॥

कान्हकी बाँसुरीकी धुन सुनकर बछड़े और गाएँ चरना बन्द कर देती थीं, व्यास, नारद तथा अन्य संन्यासी अपने तनोंपर भस्म मलते थे। (उन्हें दुःख था कि हम भी गोप गोपियाँ क्यों नहीं हुए) ॥१३॥

बाँसुरीकी धुन सुनकर गोपियाँ अपनी सुध-बुध भूल जाती थीं। वे कभी हँसती और कभी रोने लगती थीं। वे तल्लीन होकर अरण्यमें घूमने लगतीं ॥१४॥

बारहसिंगे और हिरण, इन स्वाँग रचानेवालोंके बिना, वहाँ मिलते थे। स्वाँग रचानेमें उन्हें कोई कठिनाई नहीं आती थी। राधाजी भगवान कृष्णसे कहीं दूर जाकर छिप जाती थीं ॥१५॥

---

६. रास

रादा रादा रादा रादा रादा कृष्नँ जी ।।१।।

रासँ–मन्डुँलिसच्यथ प्रेमुक भ्रस
सासु–ब'जुँ मच़ुगा'म'च़ु नच़ुनस
अख अ'किस अथुवास लायान आसुनादा
रादा रादा रादा रादा रादा कृष्नँ जी ।।२।।

तोत आ'मुत्य त'त्य म'त्य गा'मुँत्य
न्याय अ'जुँरिथ पायस प्येमुँत्य
नारुद सुदाम शोकुँदीव द्रौवतुँ प्रहलादा ।।
रादा रादा..................... ।।३।।

यन्दुँलूख कितु वन्यज़ि बिन्दुँराबन
न्यन्दरे–अनन्दर त्युथ छिनुँ डेशन
ग'जिमुँच तति सार्यन दीह वोपादा ।।
रादा रादा..................... ।।४।।

यिय गव भक्ति भावना यूगुँ ज्ञान
पानुँ म्यानि न्यश्चय क'रिथ ती मान
अथ्य दोपुख व्युत्थानस-मंजँय स मादा ।
रादा रादा..................... ।।५।।

कुँल्य कछ तुँ कञि मुञि मुँच़ुरा'विथ
सीनुँ मंजु बागुँक्य सीर बा'विथ
गूक्वलुँक्य मुक्त गा'मुत्य ददा पर्दादा ।
रारा रादा..................... ।।६।।

६. रास

राधा राधा राधा राधा राधा कृष्णजी ।।१।।

प्रेमासव पान करके हज़ारों गोपियाँ रास मण्डलके इर्द-गिर्द नाचनेमें मस्त थीं। वे एक दूसरेका हाथ पकड़कर 'राधा राधा राधा राधा राधा कृष्णजी' की टेर लगा रही थीं ।।२।।

(बड़े-बड़े ऋषि एवं भक्त) जैसे नारद, सुदामा, शुकदेव, ध्रुव और प्रह्लाद वहीं आए थे और (मारे प्रसन्नताके) पागल-से हो गए थे। उनकी समस्याएँ हल हो चुकी थीं और वे सत्पथपर अग्रसर हो गए थे ।।३।।

वृन्दावनकी तुलना इन्द्रलोकके साथ कैसे की जा सकती है ! (वृन्दावन तो स्वर्गसे भी सुन्दर एवं आकर्षक बन गया था।) उस जैसा (स्थान) स्वप्नमें भी नहीं देखा जा सकता। वहाँके सभी लोग दैहिक बन्धनोंसे पार हो गए थे ।।४।।

इसीको भक्ति-भावना अथवा योग-ज्ञान कहते हैं। मरी आत्मा ! इसीको निश्चयसे मान ले। इसीको उत्थानमें समाधिकी संज्ञा दी जाती है ।।५।।

पेड़-पौधे और पत्थर आँखें खोलकर अपने अन्तरका रहस्य प्रकट करते थे। गोकुलके (सभी लोग—तीन पीढ़ी ऊपर तक अर्थात्) दादा-परदादा भी मुक्ति प्राप्त कर चुके थे ।।६।।

रास गव येति समि रसॅु समुदुर
रास गव येति च़मि च़ोकतॅु मोदुर
रास गव ज़ि रूदॅु मुत आसि नॅु अपरादा ।
रादा रादा.......................॥७॥

अकय सु कृष्णॅु जुव सारिनॅु य सॅूत्य
जीव गन कति ज़ानॅु तति आ'स्य कॅूत्य
कृष्णॅु य अबादिमान तस रोस्त सा'री बादा ।
रादा रादा.......................॥८॥

परमानन्दॅु च़ेति लजिनय अन्द
पूशिनय युथुय प्रेम अन्दय–वन्द
राधा सर'स्वती कोरुनय प्रेसादा ।
रादा रादा.......................॥९॥

———

रास उसे कहते हैं जहाँ प्रेमानन्दका सागर उमड़ता हो। रास उस स्थितिका नाम है जहाँ मीठे-कड़ुवेका भान न रहने पाए। रास वहाँ होता है जहाँ कोई अपराध न रहा हो ॥७॥

एक ही भगवान कृष्ण सभीके साथ थे। मैं कह नहीं सकता कि वहाँ कितने जीव थे। कृष्ण ही अजर-अमर हैं, उनके विना सब नश्वर हैं--अल्पकालिक हैं ॥८॥

परमानन्द ! तुम्हारा अन्त भी अच्छा हो। ऐसा ही प्रेम तुममें आरम्भसे लेकर अन्त तक रहे। राधाजीने सरस्वतीके रूपमें तुमपर अनुग्रह किया है ॥९॥

---

७. आरस मंज़ अचऽवऽय

आरस मेज़ अचऽवऽय
विगिने ज़न नचऽवऽय ॥१॥

लांगोस पोश पूज़े
कृश्नु ज़ुव न्यनद्रि वूज़े
वुप'रस कस पचऽवऽय।
विगिने...........॥२॥

ला'ज्यहस तनि तनुंय
शेहल्येख हनिहनुय
कमव प्रेमय हचऽवऽय।
विगिने..........॥३॥

ह्यतिहस पाद शेरे
कृशुंनस ज़ि स्रेह फेरे
खबर क्या छप कचऽवऽय।
विगिने.............॥४॥

अशिर्कनि मोख्तुं अरान
छि लादन मोख्तुं हारन
तूल्य तूल्य ज़न रचऽवऽय।
विगिने.............॥५॥

पोन्युर शमुंअस पथ
त्रन क्या छु करान गथ
म'तिस पथ कर मचऽवऽय।
विगिने.............॥६॥

७. आओ, गोलाकार बनाएँ

आओ, हम एक गोलाकार बनाएँ और परियोंकी भाँति नाचें ।।१।।

हम (कृष्णजीकी) फूलोंसे पूजा करें (ताकि) वे नींदसे जागें। हम किसी परायेपर विश्वास नहीं करेंगी ।।२।।

उन्होंने उनके तनसे अपना तन लगाया। परिणामतः जो अतीव प्रेमातुर थीं, उनका ताप मिट गया ।।३।।

मालूम नहीं वहाँ कितनी थीं, जिन्होंने कृष्णजीके श्रीचरण अपने सिरोंपर रखे, ताकि उनके मनमें पवित्र प्रेमका संचार हो ।।४।।

आँसुओंके बदले उनकी आँखोंसे मोती झर रहे थे--जिनके सामने मोतियोंके हार भी आभाहीन हो रहे थे। उनके अश्रु-कण (सोनेकी तरह) रतियोंमें तुल-तुलकर बह रहे थे ।।५।।

जिस प्रकार पतंग दियेकी लौपर अपनी जान न्योछावर कर देता है, वैसे ही उन मतवालियोंने अपने प्यारे प्रियतमपर अपना जीवन न्योछावर कर दिया ।।६।।

वनस मंज ननुवारे
स्वरान तिम कृशनु प्यारे
क'न्यव तापव तचऽवऽय ।
विगिने............ ।।७।।

यि वद क्या छुय वन्डन कूठ
सु परमानन्द क'म्य ड्यूठ
बुछिथ वोनुमुत यचऽवऽय ।
विगिने............. ।।८।।

वनोंमें जहाँ पत्थर धूपसे तपे हुए थे, वहाँ वे नंगे पैर चलती थीं और अपने प्यारे कृष्णका ध्यान करती थीं ।।७।।

यह चरण कहना (लिखना) बहुत कठिन हैं, क्योंकि वह 'परमानन्द' (जो गोपियोंको प्राप्त हुआ) किसने देखा। कई ऐसे भी हैं, जिन्होंने उसे देखा और उसका वर्णन किया ।।८।।

---

८. पम्पोशि बाग़स मन्ज़

पम्पोशि बाग़स मन्ज़ वथ़ॅ्राावय ।
बावय पनॅ्ुनी गोस' तु ग़म ॥१॥

चतुर दलॅ्ु छुख गनॅ्ुपथ नावय
मूशकुॅ वाहनॅ्ु दीर्ग नास्यम् ।
मूला दा'री दार वथ़ॅ्ुरावय ।
बावय.................... ॥२॥

शठ दलॅ्ु ब्रह्मा बडि प्रेमॅ्ुबावय
हंसस ख'सिथ छुम चोन आश्रम ।
स्वादिष्टानॅ्ु थानॅ्ु वथ़ॅ्ुरावय ।
बावय.................... ॥३॥

दशि दलॅ्ु कृष्ण छुख बडि चिकुॅ चावय
गरुॅडावाहनॅ्ु नशिनाव व्यथियन ।
मनिपूरख पूरन वथ़ॅ्ुरावय ।
बावय.................... ॥४॥

द्वादशि दलॅ्ु न्यरमलॅ्ु सोबावय
वृश्बॅ्ु वाहनॅ्ु अलख त आगम
अनाहदॅ्ु मण्डॅ्ुलस मंज़ वथ़ॅ्ुरावय
बावय.................... ॥५॥

शुडशि दलुॅ मनुॅ मूडुॅ स्वबावय
दीव छी वखुॅनान ज़ीवुॅ आतम ।
वेशोदुॅ चकुॅरस मेज वथुरावय ।
बावय.................... ॥६॥

८. कमलोद्यानमें

(हे प्रभु !) मैं आपके निमित्त कमलोद्यानमें फर्श बिछाऊँगा और आपको सभी गिले शिकवे सुनाऊँगा ।।१।।

आप चतुर्दल कमलमें गणपति नामसे विराजमान हैं। आपका वाहन मूषक है और आपकी नासा लम्बी है। मैं आपके लिए मूलाधारमें फर्श बिछा दूँगा ।।२।।

षट्दल कमलमें आप ब्रह्मा नामसे बड़े प्रेमसे विराज रहे हैं। आप हंसारूढ़ हैं। मैं आपके लिए स्वादिष्ठान नामक स्थानपर फर्श बिछा दूँगा ।।३।।

दशदल कमलमें आप कृष्ण (नारायण) नामसे बड़े अन्दाज़से विराजमान हैं। आपका वाहन गरुड़ है, आप हमारे विषयोंको समाप्त करें। मैं आपके लिए मणिपुरमें फर्श बिछा दूँगा ।।४।।

द्वादश दल कमलमें आप निर्मल स्वभाववाले शंकरके नामसे विराज रहे हैं। आपका वाहन वृषभ है। आप अलख और अगम हैं। मैं आपके लिए अनहद मण्डलमें फर्श बिछा दूँगा ।।५।।

अरे मूर्ख मन ! शोड्षदल कमलमें जीवातमा विराज रहे हैं। मैं (उनके लिए) विशुद्ध चक्रमें फर्श बिछा दूँगा ।।६।।

दुदलुँ परमुँ आतम ग्वन गावय
यूगी छि त'ति करुँवुन्य शम तुँदम।
आग्या चकुँरस मन्ज़ वथुरावय।
बावय.........................॥७॥

सहस्त्र दलँ शेर पादन तल त्रावय
ग्वरुँ वाखुँ सूँत्यन वथ म्ये हावतम।
ब्रह्म रन्दुँरस मन्दुँरस मंज़ वथुरावय
बावय.........................॥८॥

जा'न्य हुन्दि ज़लुँ सूँत्य थल रुवुँनावय
सिरुज़न पम्पोश मन फ्वलिह्यम
मन म्योन मंज़ुल लोत लोत अ'लुँरावय
बावय.........................॥९॥

श्यछ म्या'त्र नीतोस बुलुँबुलुँ कावय
अजिवलुँ बागस मेज़ यियिह्यम।
लछि नावि गछि उबि मंज़ वथुरावय।
बावय.........................॥१०॥

परुँमानन्दुँ प्राव स्वखतय सावय
ग्वरुँमुँखुँ मानुन सुय सूहम।
मानु अवुँमानुँ निश रोज़ न्यर बावय
बावय पमुनी गोसतुँ गम॥११॥

[सुँदामुँ चर्यथु मंज़ुँ]

हे परमात्मा ! मैं द्विदल कमलमें आपका यशगान करूँगा, योगी वहीं शम-दम करते हैं। मैं आपके लिए आज्ञा-चक्रमें फर्श बिछा दूँगा ।।७।।

सहस्रदल कमलमें मैं आपके चरणोंपर अपना शीश अर्पित करूँगा, मुझे गुरु-वाणी द्वारा पथ दिखा दीजिए। मैं ब्रह्मरन्ध्र-रूपी मन्दिरमें आपके लिए फर्श बिछा दूँगा ।।८।।

ज्ञानके जलसे मैं आपके लिए क्यारी सींच दूँगा ताकि मेरा मन-कमलकी नाईं प्रफुल्लित हो जाए। मेरा मन (आपका) पालना है। इसमें मैं आपको धीरे-धीरे झुलाऊँगा ।।९।।

अरे कागा ! ओरी बुलबुल ! तुम उन तक मेरा सन्देशा पहुँचा दो; ताकि वे मेरे अच्छिबल जैसे इस (देहके) उद्यानमें आ जाएँ। हे सहस्रों नामों वाले ! (परमात्मा !) मैं आपके लिए सुसज्जित स्थानपर फर्श बिछा दूँगा ।।१०।।

अरे परमानन्द, तुम्हें सुख और प्रसन्नता नसीब हो। तुम "सोऽहं" को ही गुरु-मन्त्र मानते हो। तू मान तथा अवमानसे परे हो जा ।।११।।

['सुंदामुं-चर्यथ' से]

९. जय ! जय !!

घटि मंज़ु गाशा आव चानी ज़्यनय
जय जय जय दीवॅकी नन्दनय ।।१।।

सोदाम जीव ओस यार बगॅवानस
बालॅ बावॅ क्या तॅ लुकुॅचार बगॅवानस
कुनी पानॅवा'न्य द्रुन नज़िब्यनय ।
जय जय .... ।।२।।

बीरस पोशिह्यख नॅ बीरॅ बितालुय
बीरुबाल गिन्दॅनुक तॅ च़ोर जञ्जालुय
बल कस ओस ? पोशि ह्यख छ़लनय ।
जय जय .... ।।३।।

दछिनी फेरुहन खोवॅर्य मा'ली
प'छिन ज़न सरॅ करॅ वुन्य सा'ली
अ'छिन हुन्द गाश आ'स्य' लूक'नय ।
जय जय .... ।।४।।

आसन येति तिम ज़ॅ मुखॅतय हा'री
खासेन गिन्दॅवुन्य प्वख्तय का'री
मुॅलली ज़ॅ मुख्त फ'ल्य लोलॅ शोल'नय ।
जय जय .... ।।५।।

कवॅ ज़ानॅ मानि क्याह ज़ान्योव हरॅनुय
छ़ालॅ ओस मारान वालॅ ज़न हरुनुय
हरु खा'स्य अ'थि, कथि मुखतॅ हरनय ।
जय जय .... ।।६।।

९. जय ! जय !!

आपके अवतीर्ण होनेसे निशामें प्रकाश फैला। हे देवकीनन्दन, आपकी जयजयकार हो! ॥१॥

सुदामाजी (जीव) परमात्माके मित्र थे। भगवान (कृष्ण) के बालपन और भोलेपनका क्या कहना! वे दोनों आपसमें एक थे—अभिन्न थे ॥२॥ ....

गेंद-बल्ला खेलनेमें उनका मुकाबला कोई भी नहीं कर सकता था। उनके खेल-कूदमें खूब चहल-पहल और शोर हुआ करता था। किसमें तनी शक्ति थी कि वह उनकी चतुराईका मुकाबला कर सके! ॥३॥

वे प्यारे, दाईं ओर जाते हुए बाईं ओर मुड़ते थे। (वे इतने स्वतन्त्र थे) मानो झीलमें मुरगाबियाँ विचरतीं हों। वे लोगोंकी आँखों-की ज्योति थे ॥४॥

जहाँपर वे चतुर मोतियोंके हार जैसे एक-दूसरेपर सवार होनेका खेल खेलते थे (तो) मोतियोंके दो दानोंकी भाँति जगमगा उठते थे ॥५॥

मैं यह रहस्य नहीं जानता कि हरिने इसमें क्या समझा था कि वे हरिण-शावककी भाँति चौकड़ी भरते थे। उनके हाथमें मलाईके प्याले होते थे और उनकी बातें ऐसी थीं मानो मोती झर रहे हों ॥६॥

शुर्य बावुँ सिर्य मुँछि खटच खटच थावान
चांपान पानॅवुन्य ती आपुरावान
स्य नस नुँ दूर्यर मशिहेख स्यनय।
जय जय...................... ।।७।।

दोहुँ अकि बोछि लॅज्यमुँच़ बगवानस
त्वनुँ फोल सूरमुत ओसुस पानस
सोदाम जीवस ओस मेगनय।
जय जय...................... ।।८।।

सिर्य फोल चू़रि चू़रिस्यव सोदामन
पूर्योस न तुँ लोग संसारुँ पामन
अथु छ्योन बगुवान दूरि वुछ नय
जय जय...................... ।।९।।

मन्गुनस तुँ मरुनस छय कुनी वार्ता
कृश्नस योद न्यराकारुँता
तोति प्योस त्युथ क्रूठ अथुँ दारुनय।
जय जय जय दीवुँकी नन्दनय ।।१०।।

बाल स्वभाववश वे चावलकी कनकी (टूटे-फूटे चावलके दाने) मुट्ठियोंमें छिपाकर रखते थे और चवा-चवाकर एक-दूसरेको खिलाते थे। एक क्षणके लिए भी वे एक-दूसरेसे अलग न होते थे। यदि वे (कभी) दूर होते (भी) थे तो खाना तक भूल जाते थे ।।७।।

एक दिन ऐसा हुआ कि भगवानको भूख लगी और उनके अपने हिस्सेके चावल समाप्त हो चुके थे। वे सुदामजीसे (और चावल) माँगने लगे ।।८।।

चोरी-छिपे सुदामाजीने चावल खाए और भगवान खाली हाथों उनका मुँह ताकते रह गए। परन्तु बादमें सुदामाजीको (ऐसा करनेके लिए) पछताना पड़ा और संसारके ताने सहने पड़े ।।९।।

माँगना और मरना एक समान है। यद्यपि श्रीकृष्ण वास्तवमें निराकार हैं; परन्तु माँगनेमें उन्हें भी अतीव दुःखका अनुभव हुआ ।।१०।।

---

१०. दय नय दातुँ

यियिकति बखुँतिस मनिसंज़ बाव
दय नय दातुँ यस मंगने द्राव ॥१॥

अनुँग्रेह बनिनय अनुबवुँरूँफ
अ'निस अन्यिगटि करिक्याह दीफ
वुछि सुय दपि यस अ'छ सुँचराव।
दय नय........................॥२॥

स्वंगस छि वुसुँरिथ दारि तुँ बर
अछुँ रछुँ न चुँ वुन्नि त'थ्य अन्दर
हरि यस थरि गुल करि क्याह क्राव
दय नय........................॥३॥

चन्दु क'वु रावि तस यस नुँ दियि दय
द्रा'लिदस सन्नाच्यथ पोशस नुँ नय
ज्यूनमुत अन तस कति यियि छाव।
दय नय........................॥४॥

परुँमानन्दुँ वनतुँ सोदासुन
ज़'ज़ुँरिथ कुलिस क्याह यियि बासुन
हरुँदुँचि सरदी पोश फ्वलुँ नाव।
दय नय दातुँ यस मंगने द्राव ॥५॥

१०. दे न नियति

भक्तके मनमें भाव कैसे पैदा हों। यदि दैव, जो दाता हैं, उसे (कुछ माँगनेपर) प्रदान न करें ।।१।।

यदि भगवानका अनुग्रह प्राप्त न हो तो अन्धेके लिए दीपक किस कामका ? वही (उस दीपककी आभा देखेगा जिसे वे) आँखें खोलनेके लिए कहेंगे ।।२।।

स्वर्गके द्वार एवं खिड़कियाँ खुली हैं, वहाँ अप्सराएँ नाचती हैं; परन्तु जिसके भाग्यके फूल झड़ गए हों, उसे स्वर्गके बागसे क्या प्रसन्नता होगी ? ।।३।।

जिसे नियति न दे, उसकी जेबसे ही धन क्यों गुम हो जाए। उस अभागेको, जिसे (अन्न) संचित होता है, खानेके लिए कुछ भी नहीं होता है और उसके पके चावल भी कच्चे ही रहते हैं ।।४।।

अरे परमानन्द ! सुदामाकी वह (आश्चर्यजनक) घटना सुना दे, जिससे मुरझाए वृक्षमें कोंपलें फूट पड़ीं और शरद्कालके शीतमें भी पुष्प खिल उठे ।।५।।

---

११. जय दीवकी नन्दनस !

वुनि ओस वातँुनय द्वारिका मन्दरो
स'खँुरिथ रूदमुत शामँु स्वन्दँुरो
ब्रोंठँु नेरियारस सँूत्य रुँखँुमनय ।
जय जय जय दीवकी नन्दनय ।।१।।

अ'थि ह्यथ पोशिमाल द्वशिवय बा'च़ँुय
कृश्नँु जुव रुँखँुमनि करुँवुन सचँुय
अज यियि सोदाम छ्यखं नँ थेकनय ।
जय जय........................ ।।२।।

युस कांह तस कुन अख दूर फेरे
बगँुवान तस तोरुँ दह पँूर्य नेरे
नेरि छु ब्यूर तय दूरि दूरनय ।
जय जय........................ ।।३।।

स्योद सादँु सोदाम गरि द्रामुतँुये
व्योठ न जि कति छुम मारुँमोतुये
व'ध्य व'ध्य य'च़ ओस च्वध्य ब'रनय ।
जय जय........................ ।।४।।

स्वदँुरस थाह तस अशिने दारे
नाव न तँु नीशानु नाव कोर तारे
नाव तस हां'ज ब'ठच तँु बेरुँ हावनय ।
जय जय........................ ।।५।।

११. जय देवकी नन्दन !

अभी (सुदामाजी) द्वारिकाके भवनमें पहुँचे भी नहीं थे कि श्यामसुन्दर पहलेसे ही तैयार बैठे थे। उन्होंने रुक्मिणीके साथ अपने मित्रके स्वागत करनेका कार्यक्रम बनाया था ।।१।।

पति-पत्नी दोनों हाथोंमें फूलोंके हार लिए हुए थे। भगवान कृष्ण रुक्मिणीको सुदामाके आनेके बारेमें बता रहे थे और कह रहे थे कि तुम इसपर गर्व क्यों नहीं करती हो ? ।।२।।

जो कोई (भक्त) भगवानकी ओर एक पग चलेगा भगवान उधरसे दस पग उस (भक्त) की ओर आएँगे। जो भगवान के निकट आता है, भगवान भी उस (भक्त) के और अधिक समीप आते हैं। जो उनसे दूर रहता है, भगवान भी उनसे और अधिक दूर हो जाते हैं।।३।।

भोला-भाला सुदामा घरसे निकल पड़ा था; परन्तु उसे मालूम नहीं था कि मेरा मित्र कहाँ है। वह रोते-रोते आँसूके दरिया बहा रहा था ।।४।।

उसकी अश्रुधाराएँ समुद्रकी गहराइयाँ बन गईं। इस सागरमें कोई चिन्ह नज़र न आता था जिसे देखकर वह अपनी नौका खेता। भाव ही उसके मल्लाह बने और उसे कूल-कगारे दिखाने लगे ।।५।।

पकुँवुन सु यारस कुन ज़ेरि ज़ेरे
गोसुँ लोसु द्रास यारु सुन्ज़े वेरे
वदुँवुन तु लदुँवुन सगकोसुमनय ।
जय जय .... ।।६।।

लोलुँ सूँत्य वुलुँसिथ हेरि बुनुँपानय
अथुँ छोन तुँ न्यथु नोन द्रेंठ दीवानय
जान पान कसताम पुशि रावनय ।
जय जय .... ।।७।।

कथुँ म'शिरा'विथ रतुँनन हु'जय
मुख्तु लोबुँमुत पानु पानस मं'ज़ुय
अथुँ खोर द्रा'विथ वतिलार'नय ।
जय जय .... ।।८।।

बगुँवय रसुँ ओस ह्यसु डोलमुतुय
रसुँ रसुँ संसारस च़ोलमुँतुय
द्वारिकायि वा'तिथ ति छुनुँ ज़ाननय ।
जय जय .... ।।९।।

वह अपने मित्रकी ओर धीरे-धीरे बढ़ता था। अपने मित्रके प्रेमसे उसकी सारी शिकायतें और थकावट आदि दूर हुईं। वह रोता गया; परन्तु इस अश्रुजलसे अपने (भाग्यके) कुसुमोंको सींचता गया ॥६॥

यद्यपि वह खाली हाथ और दरिद्र-सा दिखाई देता था, पर नखसे शिख तक वह प्रेमसे सराबोर था। उसने अपना तन और मन किसीको सौंप दिया था ॥७॥

उसने रत्नों आदिका विचार छोड़ दिया था (क्योंकि) उसने अपनेमें ही (प्रेमके) मोती पा लिए थे। अपने हाथों या पैरोंका कोई ध्यान न रखते हुए वह आगे बढ़ता गया ॥८॥

भक्तिका आसव पीकर वह मदहोश हो गया था और शनैः-शनैः संसारसे दूर होता जा रहा था। द्वारिका पहुँचनेपर भी उसे यह ज्ञात न था कि द्वारिका यही है ॥९॥

---

१२. शेवुँ

शेवुँ परमुँ शेवु त्र्यबुंवनुँ सारो
शम्बु न्यरञ्जनुँ न्यर आकारो ।।१।।

पाँचन करुँनन हुन्द च़ँ सथग्वर
नाव चोन आसुँवुन गंगादर
च़वन वीदन अन्दर ओमकारो
शम्बु न्यरञ्जनुँ.............. ।।२।।

पज़ि दरुँबारु निशि प्योमुत दूर
वेचारुँकि सरकारुक च़ूर
दीहुँ मान अवुँमान अन्दकारो।
शम्बु...................... ।। ३ ।।

नारायन सथग्वर ज्ञानुन
सारिवुय परमुँ आनन्द मानुन
ज्ञानुँ वेज्ञानु करुँ व्यवुँहारो।
शम्बु...................... ।। ४ ।।

समुँ द्रचष्टी नावुक रठ होल
सारिनुय हुन्द नारायण ओल
सतुँ कुय ब्योल व'वू पुंख्तुँ कारो।
शम्बु...................... ।। ५ ।।

राम छुनुँ अख तय शेव ब्याखुय
कीवल सथ शबुँदुक वाखुँय
लछि नावुँ लछि बुदि प्रेकारो
शम्बु.................. ।।६।।

रामुँ ल'खिमन सथग्वर नरायन
टोठान बावु सूत्य बाबुनापन
शेवु न्यरवानुँ साख्याथ कारो
शम्बु.................. ।।७।।

[शवुँल'ग्नु मंजु]

१२. शिव !

हे शिव ! परम शिव ! ! आप तीनों भुवनोंके सार हैं। हे शम्भु ! आप निरञ्जन निराकार हैं ।।१।।

आप पाँच कारणोंके सद्‌गुरु हैं। आपका नाम गंगाधर (भी) है। आप चार वेदोंमें ओंकार हैं ।।२।।

(सद्) विचारकी सरकारका चोर देहके मान तथा अवमान रूपी अँधियारेमें सच्चे दरबारसे बहुत दूर पड़ा हुआ है।। ३ ।।

(हे जीव !) नारायणको सद्‌गुरु मानो । उन्हें ही परम आनन्द मान लो और ज्ञान एवं विज्ञानसे व्यवहार करो ।। ४ ।।

समदृष्टिकी वांछा रखो, क्योंकि सभी एक घर अर्थात् नारायणसे ही आए हैं। अरे बुद्धिमान (चतुर जीव !) सत्यके ही बीज बो ले—सत्कर्म ही कर ।। ५ ।।

राम और शिव भिन्न नहीं हैं। ये केवल सत् शब्दके पर्याय हैं, क्योंकि सत् (परब्रह्म) सहस्रों रूपों और नामोंसे युक्त है ।। ६ ।।

राम, लक्ष्मण, सद्‌गुरु और नारायण (जो एक ही प्रभुके नाम हैं) उनके प्रति भाव (प्रेम) रखनेसे अनुग्रह करते हैं। शिव ही साक्षात् निर्वाण स्वरूप हैं ।। ७ ।।

१३. कासि यमुँ ब'यि

कासि यमुँ ब'यि चोर प्रेयम तुँ लो लो
ज़्योन मरुन तय यिन गछन छि भ्रम तुँ लो लो ।।१।।

न्येति नेमुँ, युस करुँनस लगि बक्त चा'न्य
मनुँ तो'रुँगस ह्याकि र'टिथ ब'गि भक्त चा'न्य
पय सहज़ुक दियि रगि रगि भक्त चा'न्य
अनुबव बवि अनुग्रेह अगम तुँ लो लो ।।२।।

पतुँ लारुँनस अश्टुँ स्यज़ुँ तुँ स्यो'द वुछख नुँ जांह
आसि सारिनय सु गोमुत प्रोद, वुछख नुँ जांह
तस व्यन युस छु सारुँनुँय थोद वुछख नुँ ज़ाह
शान्थ यीकान्थ प्रावि शमदम तुँ लो लो ।।३।।

केंह ति रोजि नुँ ज़ानुन न ज़ानुन तस
स्वाद अस्वादुँ नि केछ़ा स्योन न नुन तस
केंह न खटुँनस लायख तुँ नोन वनुन तस
सुख द्वख क्या अ'थ्य द'पुख सम तुँ लो लो ।।४।।

कथुँ करुनस तुँ मरुनस छु नुँ हीशर
मानि बोज़नस तुँ परुँनस छु नुँ हीशर
दय स्वरुँ नस तुँ शरुँनस छु नुँ हीशर
च'मि तस यस वनि छ' नुँ चम तुँ लो लो ।।५।।

दिज़ि दीहस पज़ि नज़ि अंमृतुँ फल
दिस प्रथक तय प्रथुँमय दपुस मर तुँ फल
कान नेरि क्याह नेरिनय कानय फल
मुक्तुँ प'लुँज़्या ता'र्यज़्यस नय यम तुँ लो लो ।।६।।

१३. मृत्यु-भय दूर करेगा

(हे प्रभु!) आपका प्रेम मृत्यु-भय दूर कर देगा। जीना-मरना—आवागमन एक भ्रम है ॥१॥

जो सदा आपकी भक्ति करने लगे (वह) आपकी भक्ति द्वारा मन-तुरंगकी बाग पकड़ सकेगा (और) आपकी भक्ति (उसकी) शिरा-शिरामें सहजानन्दका संचार कर देगी। (भक्तिके) अनुभवसे परमात्माके अनुग्रहकी प्राप्ति होगी ॥२॥

अष्ट सिद्धियाँ उस (भक्त) के पीछे-पीछे आएँगी, परन्तु वह उन पर दृष्टिपात भी नहीं करेगा; क्योंकि वह उनसे ऊँचा उठा होगा। वह (भक्त) जो सबसे ऊँचा है (—परमात्मा) उसके विना किसीको नहीं देखेगा। शान्ति, एकान्त, शम, दम, उसके हो जाएँगे ॥३॥

उस (भक्त) के लिए जानना या न जानना, मधुर-कटु तथा अच्छा-बुरा, स्पष्ट कहने योग्य या गोपनीय बात कुछ भी नहीं होती (एक जैसी होती है)——इसीको कहते हैं——सुख और दुःखको समान मानना ॥४॥

बातें करना और मरना दो अलग-अलग स्थितियाँ हैं। हृदयंगम करना और (मात्र) पढ़ना दो भिन्न बातें हैं। प्रभु-चिन्तन करना और उन्हींकी शरण जाना—एक जैसी बात नहीं है। इन बातोंको वही समझेगा जो शारीरिक जीवनको भुला बैठा हो ॥५॥

इस देहको अमृत पिलाना ठीक नहीं (अपितु) इसे यह कहकर पृथक् निकालना चाहिए कि तू मरनेवाला तथा बिगड़नेवाला है। वह वाण किस कामका, जिसकी नोक न हो। वह मोती किसी कामका नहीं जिसे छेदा न गया हो ॥६॥

वीद शासतॖर तॖ पोरान य'च प'र्य प'र्य
कर्मॖ क्रमॖ अबिनानु सॖत्य स'च क'र्य कर्य
मानि युस बोज़ि बूज़्य बूज़्य श्रोच़ प'र्य प'र्य
ता'र छ' नॖ तस तारॖ तारि डोंतॖ लो लो ॥७॥

गाल हन हन तॖ कालुन त्रास म'शिराव
ज़ाल मरॖ मरॖ सोर वसॖवास म'शिराव
वरॖनाश्रमॖ क्रथ तॖ स'नियास म'शिराव
बूद पनुनुय छु सूद सूहम तॖ लो लो ॥८॥

ये'लि तेलिय अन्दॖरिमि लोलुक स्रेह,
ते'लि मेलिय पानस ह्यू लूकॖ स्रेह
खेलि अन्तर बाहिर बुकॖ बुकॖ स्रेह
छु नॖ परॖवाय गेलि आलम तॖ लो लो ॥९॥

परॖमानन्दॖ परॖमानन्द्र प्रा'विथ
प्राव नोव नोव न'विरॖव्य जन्दॖ प्रा'विथ
नावि तर अथॖ छवञारॖव्य चन्दॖ प्रा'विथ
प्रा'यज़यनॖ कुनि दिज़ि न ज़ि तस तॖ लो लो ॥१०॥

———

बार-बार वेद, शास्त्र और पुराण पढ़ने या धार्मिक कृत्योंपर अभिमान करके अपने आपको सान्त्वना देनेसे कुछ प्राप्त नहीं होगा। जो कोई श्रुतियों (के रहस्य) को समझ पाएगा, उसे तो 'ॐ' आनमें पार लगा देगा ॥७॥

जो कुछ भी तुम्हारे पास है, उसे छोड़कर यमका भय त्याग दो। इस व्यर्थ खयालको कि 'मैं मरनेवाला हूँ' आग लगा दो। वर्णाश्रम और संन्यास (तक) को भी भूल जाओ। आत्म-बोधकर—यह जान लो कि मैं वही (भगवान) हूँ ॥८॥

जब तुम्हारे रोएँ-रोएँसे प्यार छलकेगा और सभीको वैसे ही प्यार करोगे जितना अपने आपसे करते हो, तब अन्दर और बाहरके प्रेमका स्रोत फूट पड़ेगा—कोई बात नहीं यदि सारा संसार तुम्हारी हँसी उड़ाए ॥९॥

हे परमानन्द! परम आनन्द प्राप्त करके जन्म-जन्मोंमें प्राप्त करता रह। कुछ भी (सांसारिक वस्तु) न रखनेका (नावका) भाड़ा देकर पार हो जा। कहीं प्रतीक्षा न करना या सुस्ताना नहीं ॥१०॥

१४, युस प्रावि

तस कुस मरि तूॅ सु कस मरे
युस प्रावि मरे सहज़ बाव ॥ १ ॥

पानस यन्द्रिय आयित्य करे
अन्द'रुॅ न्यबरुॅ सोर्यस ताव
मन बोद शोमरिथ च़ यथ सु मरे ।
युस प्रावि................ ॥२ ॥

सा'लिख छुॅ मा'लिख प'नुॅनि गरे
तस यारुॅ बलुॅ डोलि पालुॅक्य तुॅ नाव
यवुॅ तवुॅ सुय ववुॅ सरस तरे ।
युस प्रावि................ ॥ ३ ॥

फोलमुत यि हियिबाग यस ज़'ज़रे
कॅरिसुय पम्पोशि डलस क्राव
ज़ज़रिथ तुॅ फवलुन यियि यथ थरे ।
युस प्रावि................ ॥ ४ ॥

म'रुॅनुॅ ब्रो'ठुय युस स'खरे
रोज़ यस नुॅ यमुॅकें'क'रुॅन्ग ग्राव
सुय कस ख्वश यि यि सु कस खरे ।
युस प्रावि................ ॥ ५ ॥

सथ ग्वरुॅ पादन शेर पुशरे
म'रिथ डुबारुॅ सु मा ज़ाव
वुॅज़ुम्य पा'ठिन दमा बरे ।
युस प्रावि................ ॥ ६ ॥

१४. जो पाएगा

उस व्यक्तिके लिए कोई नहीं मरता, न वह किसीके लिए मरता है, जिसे अपने जीवन-कालमें ही आत्मबोध हुआ हो ।।१।।

वह इन्द्रियोंको वशमें करके भीतर-बाहरके तापको मिटाता है और मन तथा बुद्धिको शान्त करके चित्-स्वरूप (परमात्मा) का ही स्मरण करता है ।।२।।

योगी अपने 'घर'का स्वामी है। 'घाट'पर विविध प्रकारके साधन उसे पार उतारनेके लिए उसकी प्रतीक्षामें रहते हैं। किसी भी (पार उतरनेके) साधन द्वारा वह भवसागरको पार कर देगा ।।३।।

वह, जिसकी 'फुलवाड़ी' खिली हुई हो, यह पहले ही देखना है कि यह (फुलवाड़ी) पियरानेवाली (नश्वर) है। वह (व्यक्ति कभी न मुरझानेवाले) "कमलों" का आनन्द लेता है। जो 'बेल' मुरझाकर भी हरी-भरी रहे ।।४।।

मरनेसे पहले ही जो मरनेके लिए तैयार बैठा हो, उससे यम किंकरोंका कोई शिकवा नहीं होगा। वह किसीको न प्रिय लगेगा न अप्रिय ही ।।५।।

सद्गुरुके चरणोंमें जो अपना शीश समर्पित करता है, वह पुनः नहीं जन्मता। वह (इस संसारमें) एक प्रवासीकी भाँति रहता है ।।६।।

हरि नुं थरुँ थरि पन योद हरे
स्वरे युस हरुँ सुन्दुँय नाव
शरन युस गव तस कोनुँ वरे।
युस प्रावि................ ॥ ७ ॥

युथ मुल मा पाथि कुनि ह्व'नरे
गाटु छुय गाट्य ती म'शिराव
ज'लुयं ज़ाल वून लोग बालुँ बरे
युस प्रावि.............. ॥ ८ ॥

कालस अरपन तुँ कालुँच्चि थरे
अदुँ वो'त्र सोरुय अवशद त्राव
यह बात जानो सब से परे।
युस प्रावि................ ॥ ९ ॥

युस ईश्वरस पान पूशरे
सूरिथ सोरुय चिकय च्राव
राथा तुँ साथा मा रावरे
युस प्रावि..............॥ १० ॥

मोठ पान यस तस ट्याठे मो'दरे
स्वदरे सुदरुँ पोर्यस नुँ नाव
पानय पानस युस वोदरे।
युस प्रावि..............॥ ११ ॥

सु शेरि चा'न्य पादिकमल दरे
परमानन्दस यि मिनथ थाव
अज्ञानुँ न' तुँ अपुँत्रेंत्य या मरे।
युस प्रावि मरे सहज़ भाव ॥ १२ ॥

जो हरिका नामस्मरण करता है, वह (वायु द्वारा आन्दोलित) पत्तोंकी नाईं थरथराता नहीं। वह जिसकी शरणमें गया, उसीका वरण क्यों न करेगा? ॥७॥

ऐसी (भक्ति जैसी) मूल्यवान कला कोई नहीं। चतुराई हानि-कारक ही है, उसे भूलो—मकड़ी अपने ही (बुने हुए) जालमें फँसती जाती है ॥८॥

हम सभी कालके अर्पण हुए हैं। अतः (शरीरको बनाए रखनेकी) सभी औषधियोंका त्याग कर दो—यह बात सबसे परे (सार रूप) जान लो ॥९॥

जो सभी उमंगोंको समाप्त करके ईश्वरेच्छा पर अपने आपको छोड़ दे, वह रात या कोई भी क्षण नहीं गँवाता ॥१०॥

जिसे इस (नश्वर) कायाकी चिन्ता नहीं, उसके लिए कड़ुवा पदार्थ भी मीठा बन जाता है। जो अपना उद्धार आप करेंगे, उनका समुद्रमें तूफान भी कुछ नहीं बिगाड़ सकता ॥११॥

(हे प्रभु!) परमानन्द पर यह एहसान कीजिए कि उसे अपने चरण-कमल सिरपर धारण कर लेने दीजिए। नहीं तो वह बेमौत या अज्ञानमें ही मर जाएगा ॥१२॥

१५. सहज़ुँ व्यचार

गिन्दुना छुँ ज़िन्दुँ मरुन
पानुँ रोस्त पान स्वरुन
सहज़ुँ व्यचार करुन ॥ १ ॥

श्रुत छे तस रुस्त छुनुँ
मूद युस सु लुस्त छुनुँ
बु दपुन फ्रूस्त छुनुँ ॥ २ ॥

दीह तुँ मन तु बोद ति छुनुँ
व्यद रेंद स्यद ति छुनुँ
मूह तुँ भ्रम तुँ मदति छुनुँ ॥ ३ ॥

वीदव वोनुमुतुय
बुदव वनि अनुसुतुय
बुदव निशि छ्योनुमुतुय ॥ ४ ॥

शक्त वनहस तुँ शेवय
जाव कस तुँ आव कवय
न्यशि तुँ द्यन श्यशि तुँ रवय ॥ ५ ॥

सथ चेथ आनन्दुँ मये
वातिथ मोयि सोये
वातिथ यस नुँ मुये ॥ ६ ॥

मनि दुय कासुँ वुनुय
आसिथ आसुँ वुनुय
नासिथ बासुँ वुनुय ॥ ७ ॥

१५. सहज विचार

जीते जी मर जाना एक बाजी लगाना है—अहम्को छोड़कर अपनी वास्तविकतापर विचार करना है——आत्मबोध करना है ।।१।।

श्रुति कहती है कि उस (परमात्मा) के बिना कुछ नहीं । जो मरता है वही वास्तविक "मैं" नहीं । अतः शरीरको 'मैं' 'मैं' कहना अच्छा शकुन नहीं ।।२।।

वास्तविक "मैं" देह, मन या बुद्धि नहीं——विधि, ऋषि तथा सिद्धि भी नहीं और मोह, भ्रम या मद भी नहीं है ।।३।।

वेदोंने उस (परमात्मा) की घोषणा की है—बुद्धिमानोंने उसे अच्छी तरहसे पहचाना है (तथापि) वह विचार-शक्ति एवं चिन्तनसे परे है ।।४।।

चाहे तुम उसे शिव कहो या शक्ति——वह न किसीसे जन्मा है न उसका अस्तित्व किसी कारणके आधीन है । वह तेजःपुञ्ज है——रातमें शशि और दिनमें सूर्य है ।।५।।

वह सत्, चित् और आनन्दमय है । वह कण-कणमें विद्यमान है——जिसे पाकर मनुष्य मरता नहीं ।।६।।

वह मनसे द्वैतभाव मिटाता है । वह है इसलिए कि वह है । जो न होकर भी हमें भासित होता है, उसका कारण भी वही है ।।७।।

परमात्मा तँ अपर
दीशँ कालँ व्यन तँ सथ ग्वर
बोरुमुत यस्य चराचर ॥ ८ ॥

बूजिथ वारुँ पा'ठी
त्रा'विथ ठा'ठच अटा'ठी
पाखंडी तँ पा'ठी ॥ ९ ॥

च्यथ स्वरोनुय चयदाकाश
सुर्यि त'ति छुय स्वप्रेकाश
अस्त वँदय नँ थ्यथ नाश ॥१०॥

तति सोरुय छु श्रपान
तति मा पान व्यपान
बगुवान त'थ्य छि दपान ॥११॥

सुर्यस मा छें छाये
चँय वोँथ अमिशाये
बायि ! चलनय चय ग्राये ॥१२॥

य'च गाटँ प्ययि गाटय
त्रा'विथ फुटँ फ्राटय
फुट क्याजि तिय बु वाटय ॥१३॥

बगुवानँ अविनाशे
अविनाशि आकाशे
गटँ आ'स्यतन तँ गाशे ॥१४॥

तस रो'स्त यी चँ जानख
ती ती ठो'र चँ मानख
रोचक तय भयानख ॥१५॥

वह परमात्मा है, उससे परे कुछ भी नहीं। वह देशकालातीत है और सभीका सद्गुरु है। वह चराचरमें व्याप्त है ।।८।।

जब कोई इस कथनको ध्यानसे सुने तो उसे प्रिय तथा अप्रिय, पाखण्डी और मात्र जिह्वासे ही पाठ पढ़नेवाले त्याग देने होंगे ।।९।।

चित् आकाशमें उस चित्स्वरूपका ध्यान करो। वहाँ सूर्य स्वयमेव ही प्रकाशमान है जो न उदित होता है न अस्त; न जन्मता है और न नष्ट ही होता है ।।१०।।

उसीमें सभी समा जाते हैं। वहाँ 'अहम्' रह ही नहीं सकता— उसीको भगवान कहते हैं ।।११।।

सूर्यकी छाया नहीं होती। छाया तो तू ही बनाता है—तू बीचमेंसे हट जा। ऐसा करनेसे अरे भाई! तुम्हारे सन्देह दूर होंगे ।।१२।।

अधिक चतुरता (दिखाने) से अहित ही होगा। यदि टूटी-फूटी वस्तुएँ फेंक दी जाएँ; फिर ऐसी कोई भी वस्तु नहीं रह जाती जिसे ठीक करना है ।।१३।।

भगवान अविनाशी है, वह आकाशकी भाँति है। वह तेजःपुञ्ज होनेके कारण हर क्षण प्रकाश देता है—चाहे दिन हो या रात ।।१४।।

उस परमात्माके बिना जो कुछ भी तुम्हें दिखाई देता है, चाहे वह रोचक हो या भयानक, वह सब उस ज्योतिके लिए एक आवरण बन जाता है ।।१५।।

शंकायि मनि त्रा'विथ
यिम युथ गय प्रा'विथ
सा'दिथ रूद्य सा'विथ ।।१६।।

प्रेमॖ स्वर व'हवने
रेह हेयि हनि हने
पीञ्ज लगि तीलॖ कने ।।१७।।

लव-द्वारि मन्दोरे
वॖपा'र्य मन दोरे
लय तथ त्रोपोरे ।।१८।।

धारु येलि वुछि मन्दर
रोजि नॖ त'थ्य अन्दर
अन्दॖ वन्दॖ श्यामॖ स्वन्दर ।।१९।।

व'छॖ त्रा'विथ तॖ दारे
योर ज़ानि तोर लारे
सव्यन क्याज़ि लारे ।।२०।।

'लिवोन छॖ ललॖ वुनुय
बालॖ गूपाल कुनुय
वॊ'न थव छुख न ओनुय ।।२१।।

वॊनमुत यि स्वात्मॖ यछे
सहज़स प्राव पछे
शम तॖ दम नाव ग'छे ।।२२।।

रमानन्दॖ वॊन्दस
कृश्नस ज़ि पान वन्दस
सोन्तस क्या तॖ वन्दस
सहज़ु व्यचार करुण ।।२३।।

————

अपने मनकी शंकाओंका त्यागकर जिन्होंने आत्मबोध किया, वे अब चिर शान्तिमें विश्राम कर रहे हैं ।।१६।।

प्रेम-मन्त्र दहकती हुई आग है, जो शनैः शनैः तुम्हारे अस्तित्वको लपेट लेगी और तब पानी भी तेलका ही काम देगा ।।१७।।

इस नव द्वारोंके भवन (शरीर) के चारों ओर द्वार एवं खिड़कियाँ हैं, अतः इसमें वास करनेवाला मन चारों ओर घूमता है। अतः आत्मज्ञानमें वही लीन होगा जो इस भवनके सभी द्वार एवं खिड़कियाँ बिलकुल बन्द कर लेगा ।।१८।।

जब इस मन्दिर (भवन)को अच्छी प्रकार देख चुकोगे तो इसीमें नहीं रहना। क्योंकि श्यामसुन्दर (परमात्मा) सीमित नहीं, असीम है। वह अनादि और अनन्त है ।।१९।।

फिर इसकी सब खिड़कियाँ खोल दो। जहाँ इस मनकी इच्छा हो, इसे जाने दो। क्योंकि अब यह (मन) उसके बिना कहीं नहीं जाएगा--और जाएगा भी क्यों ? ।।२०।।

लल्लेश्वरी (कश्मीरीकी आदि कवयित्री तथा महायोगिनी) ने कहा है कि बालगोपालको इस मनके पालनेमें बिठाकर झुलाना है। तुम अन्धे तो हो नहीं, अतः आँखें खोलकर देखो ।।२१।।

उस (लल्लेश्वरी) ने कहा है कि आत्म-ज्ञान प्राप्त करनेके लिए अटल विश्वास रखो। फिर शम या दम की कोई आवश्यकता नहीं ।।२२।।

परमानन्दकी साध है कि चाहे बहार हो या जाड़ा (यौवन हो या वृद्धावस्था) वह सदा भगवान कृष्णकी बलिहारी जाएगा ।।२३।।

कवि-श्री माला

१.	असमिया	रघुनाथ चौधुरी
२.	,,	नलिनीबाला देवी
३.	मणिपुरी	कमलसिंह लमाबम
४.	बंगला	सत्येन्द्रनाथ दत्त
५.	,,	काजी नज़रुल इस्लाम
६.	ओड़िया	गंगाधर मेहेर
७.	,,	कालिन्दीचरण पाणिग्राही
८.	मराठी	कृष्णाजी केशव दामले 'केशवसुत'
९.	,,	यशवन्त दिनकर पेण्ढरकर
१०.	गुजराती	दयाराम
११.	,,	'सुन्दरम्'
१२.	सिन्धी	किशिनचन्द 'बेवसि'
१३.	कश्मीरी	परमानन्द
१४.	पञ्जाबी	भाई वीरसिंह
१५.	,,	अमृता प्रीतम
१६.	तेलुगु	तिरुपति-वेंकट कवुलु
१७.	,,	काटूरि वेंकटेश्वरराव और पिंगलि लक्ष्मीकान्तम्
१८.	तमिल	सुब्रह्मण्य भारती
१९.	,,	नामक्कल रामलिंगम पिल्लै
२०.	कन्नड़	दत्तात्रेय रामचन्द्र बेन्द्रे
२१.	,,	'कुवेम्पु'
२२.	मलयाळम्	वल्लतोळ नारायण मेनन
२३.	,,	जी. शंकर कुरुप
२४.	उर्दू	मुहम्मद इकबाल
२५.	हिन्दी	जयशंकर प्रसाद

[प्रत्येक पुस्तकका मूल्य दो रुपए है। डाक व्यय अतिरिक्त]

प्राप्ति स्थान—राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा (महाराष्ट्र)